# चन्दामामा

माँ - बच्चों का मासिक पत्र

1st July '55

6

SANKAR

Photo by S. G. Pradhan

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

आता है याद मुझको
गुज़रा हुआ ज़माना !

प्रेषक
श्री. केदारनाथ, पूना

# भविष्य उनके हाथों में है !

उन्हें अच्छी तरह पढ़ाइये और जितना आपसे बन पड़े, उनके स्वास्थ्य की, मानसिक, नैतिक और शारीरिक उन्नति में हाथ बँटाइये। तभी वे भविष्य के कार्यक्रम में एक सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त कर सकेंगे। **जे. बी. मंघाराम एण्ड कंपनी** बड़ी प्रसन्नता के साथ उनके स्वास्थ्य की उन्नति एवं प्रगति का, अपने थोड़े-से अंश का योग-दान प्रस्तुत करती है।

जे. बी. मंघाराम के बिस्कुट स्वास्थ्यकर गेहूँ, दूध और ग्लूकोज़ से बनाये गये हैं, जो उन्हें अपने स्कूल और कालिज की व्यस्तता की घड़ियों में स्फूर्तिदायक रहने की शक्ति प्रदान करते हैं !

**जे. बी. मंघाराम एण्ड कंपनी**, ग्वालियर.

NAS 208

ये हर जगह प्राप्त हैं।

# विषय - सूची

★

बिड़ला
कटेली चम्पा
केश तैल
अनुपम गन्ध
एवं केश शोभा
केलिये

वीर-बच्चा
बच्चों की ताकत के लिये
अनुपम टानिक
(बालामृत)
VEER BACHHA

बहु प्रतीक्षित—

# चन्दामामा

[ अंग्रेजी ]

जुलाई १९५५ का उद्घाटन का प्रथम अंक प्रकाशित हो गया।

★

आप अपनी प्रति हमारे एजेण्ट के पास सुरक्षित करा लीजिए
या सीधे हमारे यहाँ चन्दा भेज दीजिए।

★

# जान्हमामु

[ उड़िया ]

भी शीघ्र ही निकलनेवाला है !

एक प्रति :
रु. ०-६-०

★

सालाना चन्दा :
रु. ४-८-०

चन्दामामा पब्लिकेशन्स,
वड़पलनी :: मद्रास - २६

## ग्राहकों को एक ज़रूरी सूचना।

ग्राहकों को पत्र-व्यवहार में अपनी ग्राहक-संख्या का उल्लेख अवश्य करना चाहिए। जिन पत्रों में ग्राहक-संख्या का उल्लेख न हो, उन पर कोई ध्यान नहीं दिया जा सकता। पता बदल जाने पर तुरन्त नए पते के साथ सूचना देनी चाहिए। प्रति नहीं पाई, तो १० वीं के पहले ही सूचित कर देना चाहिए। बाद को आनेवाली शिकायतों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा। —व्यवस्थापक, 'चन्दामामा'

# चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

"चन्दामामा" की लोकप्रियता मास प्रति मास बढ़ती जा रही है। इसके पाठकों का क्षेत्र निरन्तर विस्तीर्ण होता जा रहा है।

हमारा हमेशा यह प्रयत्न रहा है कि मनोरंजन के रूप में शिक्षाप्रद कहानियाँ भारत के शिक्षित परिवारों में, "चन्दामामा" द्वारा पढ़ी-सुनाई जायँ।

"धूमकेतु", हमारा धारावाहिक उपन्यास, इस प्रयत्न का एक दृष्टान्त था। पाठकों ने इसको बहुत पसंद किया, यह हमारे पास आये हुए पत्रों की संख्या से बखूबी सिद्ध होता है। इस अंक के साथ "धूमकेतु" समाप्त हो रहा है।

आगामी मास से एक और रोमांचकारी धारावाहिक उपन्यास प्रारम्भ किया जायेगा, जो "धूमकेतु" से भी अधिक रोचक और मनोरंजक होगा!

वर्ष : 6 जुलाई 1955 अङ्क : 11

# चोर मुछन्दर !

सुन्दरपुर में रहता था इक,
नामी चोरों का सरदार;
नाम मुछन्दर ही था उसका,
चोरी के फ़न में हुशियार!

बहुत दिनों का एक पुराना,
बस्ती के बाहर था मन्दिर;
ग्राम-देवता की प्रतिमा थी,
उसमें सजी-सजायी स्थिर।

सुन्दर सुन्दर गहने उसके,
देख एक दिन मन ललचाया;
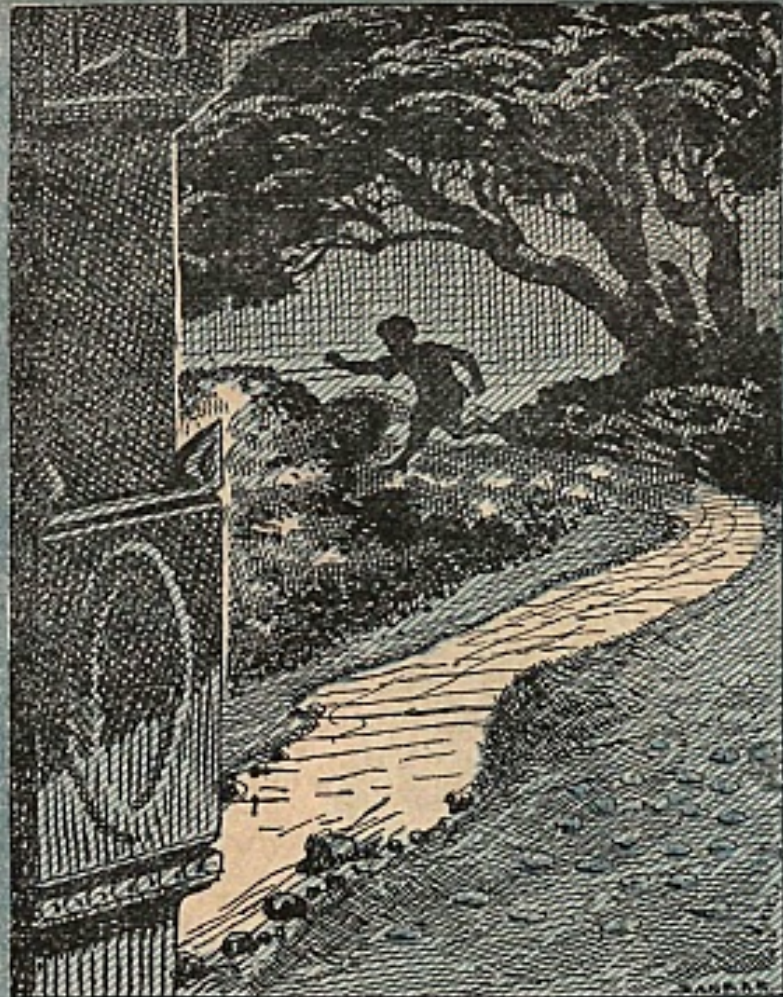
लगा सोचने तभी मुछन्दर—
चोरी का झट 'प्लान' बनाया!

बीत चली जब आधी रजनी,
निद्रामग्न हुआ संसार;
चोर मुछन्दर चुपके से तब;
जा पहुँचा मन्दिर के द्वार।

लगा दिये अन्दर से साँकल,
गहने सारे लिये निकाल;
आहट पाकर रखवाले ने,
दी मुंडी बाहर से डाल।

फिर दौड़ा वह गया गाँव में,
सब मर्दों को शीघ्र जगाया;
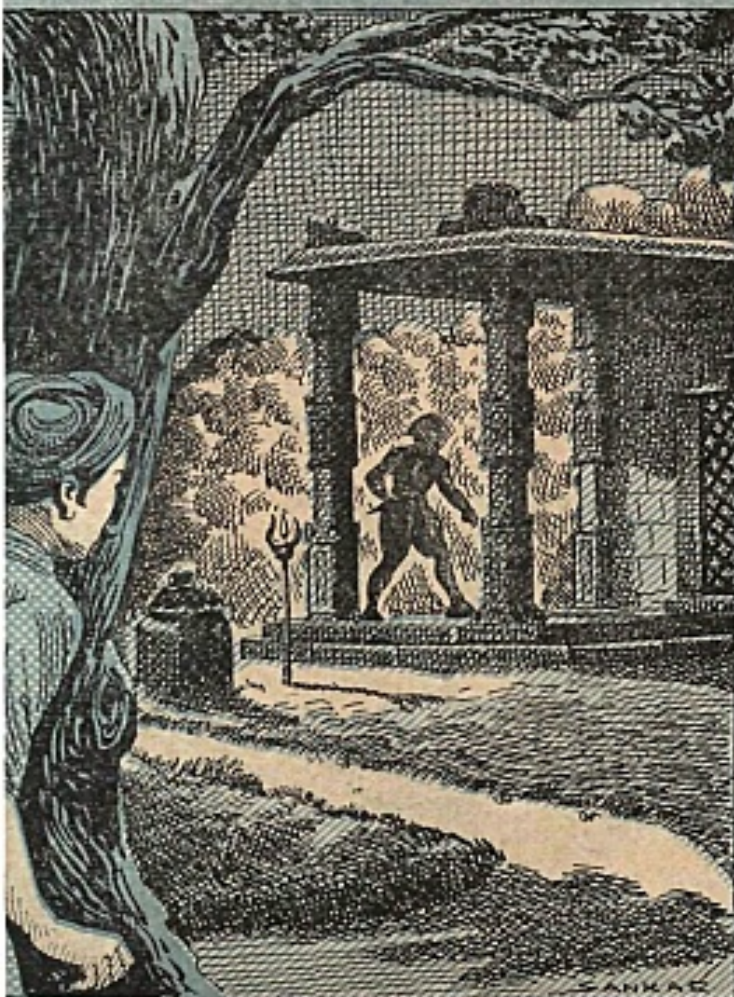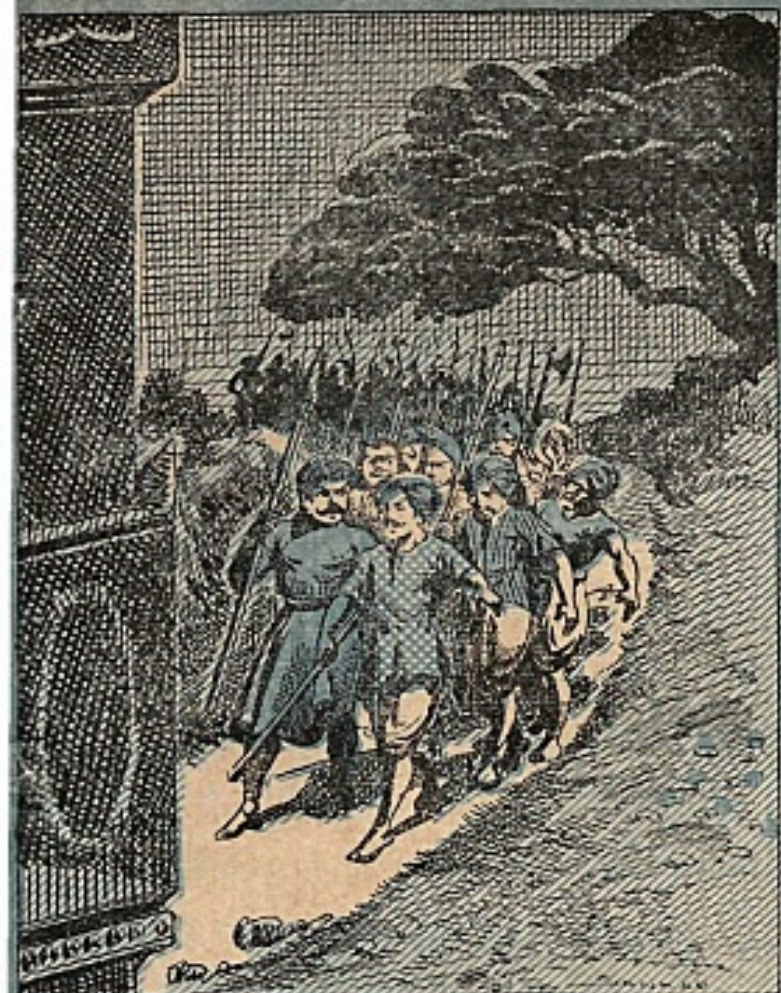
और भीत हो भागे सब जन,
किसको उस क्षण कौन देखता !

मौका पाकर हँसते हँसते,
ग्राम-देव का वेष उतारा;
बाँधी गहनों की गठरी औ',
अपने घर को चोर सिधारा ।

कुछ दूरी से देख यही सब,
रखवाले को रोना आया;
नहीं देवता ! हाय, चोर था !!
यही जानकर वह पछताया !

ग्राम-देवता के प्रांगन में,
बुला सभी को ले वह आया ।

सभी बहादुर योद्धा आये,
बरछे - भाले - लाठी लेकर—
"दरवाज़ा खोलो अब जल्दी !"
कहा उन्होंने धक्का देकर ।

सुनते ही यह खोल किवाड़ें,
कूद पड़े झट निकल देवता—
"ओम् ओम् सत् काली !" कहते
लाल लाल आँखें कर देखा ।

लखते ही यह चिल्लाये सब—
"साक्षात् देवता ! अरे देवता !"

# मुख - चित्र

पांडव जब वनवास में थे, मार्कण्डेय उनके यहाँ आकर कई कहानियाँ सुनाया करता था। निम्न कहानी भी उन्हीं में से एक है :

पहिले कभी वैवस्वत मनु नाम का एक राजा रहा करता था। जब गंगा नदी के किनारे वह तपस्या कर रहा था, एक छोटी मछली ने आकर उससे यों प्रार्थना की—"हे महानुभाव! हमारी जाति में बड़ी मछलियों का छोटी मछलियों को निगलने का रिवाज़ है। इसलिये मुझे डर लग रहा है कि कहीं कोई बड़ी मछली मुझे न निगल जाय! अगर आप मुझे यहाँ से निकालकर किसी सुरक्षित जलाशय में छोड़ देंगे तो मैं आपके एहसान का बदला चुका दूँगा!"

दयालु वैवस्वत ने उसे वहाँ से ले जाकर एक दूसरे पोखर में डाल दिया और उसकी निगरानी करने लगा। कुछ ही दिनों के अन्दर वह मछली बड़ी हो गयी और उसने फिर राजा से प्रार्थना की—"हे महाराज! यह जगह मेरे लिए काफ़ी नहीं है! कृपा करके एक बड़े पोखर में मुझे डाल दीजिएगा........!"

उसकी बात मानकर राजा ने एक बड़े पोखर में उसे छोड़ दिया। बाद को फिर वह मछली इतनी बड़ी हो गयी कि उस पोखर में वह समा नहीं सकी! तब राजा ने उसकी इच्छा के अनुसार उसे फिर से गंगा नदी में छोड़ दिया। आखिर जब गंगा नदी भी उसके लिये छोटी मालूम हुई तो उसने समुद्र को जाने की तैयारी करके राजा से कहा—"हे महाराज! अभी महा प्रलय होनेवाला है। तब आप महान सप्त ऋषियों और सृष्टि के समस्त जीवों को एक नाव में चढ़वाकर समुद्र में चले आइये! मैं अपने सींग के सहारे उस नाव को महा प्रलय से बचाऊँगी....!"

कुछ समय बीतने पर महा प्रलय आ ही गया। तब महा विष्णु ने मछली के रूप में उस नाव को महा प्रलय से बचाकर हिमालय की चोटी पर पहुँचाया, जो महा प्रलय से सुरक्षित थी! इसी वैवस्वत मनु के ही कारण संसार में पुनः सृष्टि का प्रारंभ हुआ।

राजा ब्रह्मदत्त के ज़माने में काशी में एक बहुत बड़ा रईस रहा करता था। जब उसने नौ करोड़ रुपये पूरे कर लिये, तो उनके एक लड़का पैदा हुआ। इसलिये लड़के का नाम उन्होंने नवकोटी नारायण रखा।

नारायण के पिता ने, जो कुछ लड़के ने माँगा, उसको दिया। उसकी हर इच्छा वह पूरी किया करता। उसकी जो मर्जी होती, करता। वह धूर्त और दुष्टों का सहवास करने लगा। थोड़े दिनों बाद पिता का स्वर्गवास हो गया।

छुटपन से जो कर्ज़ नारायण लेता आया था, बढ़ता गया। महाजनों ने उसे यकायक घेर लिया और अपना कर्ज़ माँगने लगे। उस हालत में, नारायण जीवन से ऊब उठा। और कोई रास्ता नहीं था। उसने आत्म-हत्या कर लेने में ही अपना भला समझा। फिर कुछ सोचने के बाद महाजनों से उसने कहा—"मैं गंगा के किनारेवाले पीपल के पेड़ के नीचे रहूँगा। वहाँ हमारे पूर्वजों की निधि गड़ी हुई है। आप अपने दस्तावेज़ों को लेकर वहाँ आइये"।

सब के सब उस पीपल के पेड़ के नीचे जमा हो गये। नारायण निधि को ढूँढ़ता ढूँढ़ता, इधर उधर लड़खड़ाने लगा। महाजनों को कुछ दूरी पर खड़ा देख, वह धड़ाक से "जय परमेश्वर" कहता गंगा में जा कूदा। और देखते देखते गंगा का तेज़ पानी उसे बहुत दूर बहा ले गया।

* * *

उन दिनों बोधिसत्व ने एक हरिन का रूप धर रखा था। वह और हरिनों के झुण्ड से अलग, गंगा के किनारे, एक घने आम के बगीचे में रहा करता था। वह
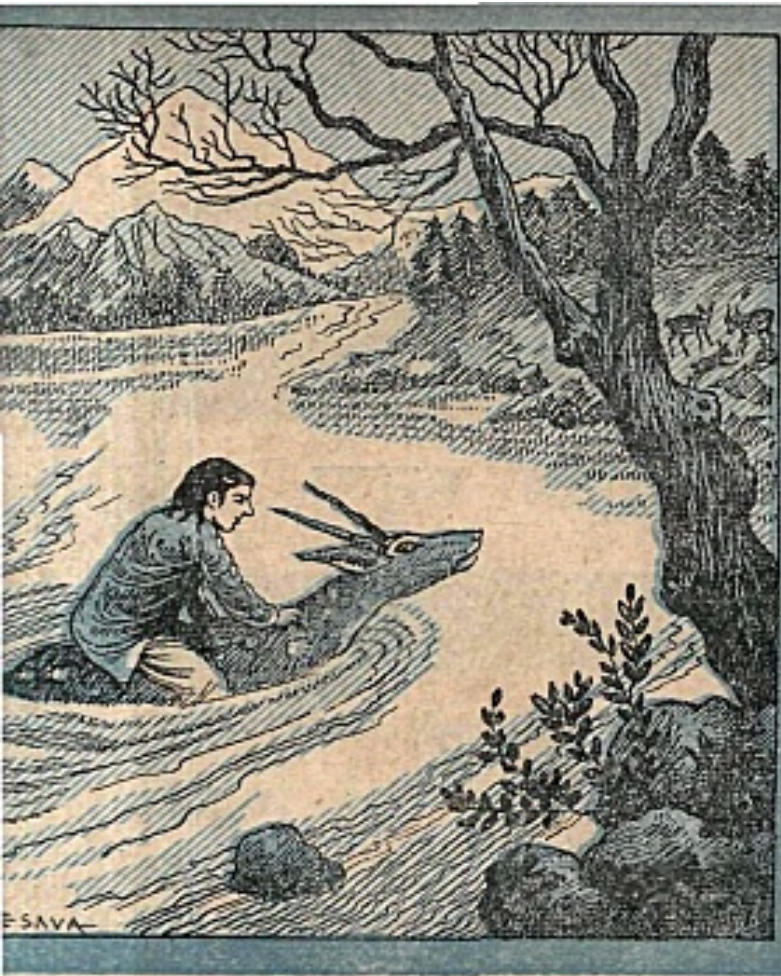
हरिण भी और हरिणों से बिल्कुल भिन्न था—सुनहला रंग, चान्दी के सींग, हीरे के समान आँखें, लाख के खुर—उसमें एक प्रकार का दिव्य सौन्दर्य था।

उस हरिण को आधी रात के समय किसी मनुष्य का विलाप सुनाई दिया। कौन रो रहा है—यह जानने के लिये, सुनहला हरिण, उल्टा तैर कर नारायण के पास पहुँच गया।

"नारायण को अपनी पीठ पर चढ़ाया और किनारे की ओर वह तैर पड़ा। फिर उसको अपने बाग में ले गया। वह जंगल से उसकी भूख मिटाने के लिये कन्द मूल फल इकट्ठा कर लाया।

कुछ दिनों बाद हरिण ने कहा—"मैं तुम्हें इस जंगल से बाहर निकालकर तुम्हारे राज्य का रास्ता दिखा दूँगा। आराम से चले जाओ। परन्तु एक ही एक बात है—महाराजा या कोई और रईस लाख लोभ दिखाये, पर यह न कभी बताना कि फ़लाने जंगल में सोने का हरिण है। बस यही मेरी इच्छा है। इसे निभाना।" नारायण मान गया। उसके वचन का विश्वास कर, हरिण ने उसको अपनी पीठ पर चढ़ाया, और काशी जानेवाले रास्ते पर उसको छोड़ दिया।

* * *

ठीक जब नारायण काशी नगर में पहुँचा तो वहाँ एक विचित्र घटना घटी। सुनते हैं, उससे पिछली रात महारानी ने सपने में किसी सोने के हरिण को उपदेश देते देखा था। रानी ने जाकर महाराजा से कहा—"अगर सचमुच सोने का हरिण न हो तो भला क्यों वह मुझे स्वप्न में दिखाई देता? हो न हो, ज़रूर ऐसा कोई हरिण है। आप जल्द से जल्द उसे पकड़कर दीजिये; वरना मेरे प्राण नहीं रहेंगे।"

झट राजा ने दरबार बुलवाया। सलाह-मशविरा किया। बहुत सोचने-समझने के बाद उन्होंने यह तय किया: एक हाथी पर हौदा रखा जाय, हौदे में सोने की पिटारी और उसमें हज़ार मोती रखे जायँ। फिर हाथी का जुलूस निकाला जायगा। जो कोई सोने के हरिण के ठिकाने के बारे में जानकारी देगा, उसका सम्मानपूर्वक हाथी पर चढ़ाकर जुलूस निकाला जायेगा।

इस प्रकार की एक घोषणा निकाली गई और शहर शहर में सेनानी यह घोषणा पढ़ रहे थे। ढिंढ़ोरा पीटा जा रहा था। ठीक उसी समय नारायण ने काशी नगर में कदम रखा।

उसने सेनानी के पास जाकर कहा—"आप जिस सोने के हरिण की तालाश कर रहे हैं, उसके बारे में मैं सब कुछ जानता हूँ। मुझे राजा के पास ले जाइये, मैं सब बता दूँगा।"

बाद में, नारायण राजा और उसके दरबारियों को साथ लेकर जंगल में गया। सोने के हरिण की रहने की जगह दिखाकर, वह वहाँ से कुछ दूरी पर खड़ा हो गया।

राजा ने दरबारियों से कहा—"हथियार लेकर चारों तरफ़ से घेरो। देखो, हरिण कहीं बचकर न निकल जाये। होशियार रहना।" सब ने तैयार होकर एक बार शोर किया। हरिण का रूप धारण किये हुये बोधिसत्व ने वह शोर सुना।

"शायद कोई बड़ा अतिथि हमारे यहाँ आया है। उसका स्वागत किया जाय" यह सोचते हुये वह उठा। औरों से बच निकलकर वह सीधा राजा के पास गया।

हरिण की तेज़ चाल को देखकर राजा हैरान रह गया। हरिण पर छोड़ने के

लिये उसने धनुष पर बाण चढ़ाये। तब हरिण ने यों कहा—"राजन्! जल्दी मत करो। पहिले यह बताओ कि मेरे रहने की जगह के बारे में तुम्हें किसने बताया है?"

राजा को ये बातें सुन, ऐसा लगा, जैसे कोई अमृतवाणी सुनी हो। उसके बाण अपने आप नीचे गिर गये।

बोधिसत्व ने फिर पूछा—"तुम्हें किसने मेरे रहने की जगह के बारे में बताया है?" राजा ने नारायण की ओर दिखाया।

तब बोधिसत्व ने यों उपदेश दिया: "शास्त्रों में लिखा है कि मनुष्यों से बढ़कर इस दुनियाँ में कृतघ्न नहीं है, वह ठीक ही है। जन्तुओं की भाषा समझा जा सकता है, पक्षियों की भी। परन्तु मनुष्यों की भाषा समझ लेना ब्रह्मा के लिये भी साध्य नहीं है। क्योंकि, मनुष्य की किसी बात पर भी विश्वास नहीं किया जा सकता। मन में कुछ होता है और ज़बान पर कुछ और।" बोधिसत्व ने बताया कि उसने कैसे नारायण की रक्षा की थी, और उसके रहने की जगह के बारे में न बताने का उसने कैसे वचन दिया था।

राजा क्रुद्ध हो उठा—"इस तरह का कृतघ्न इस भूदेवी के लिये ही भार है। एक बाण से ही इसका काम तमाम किये देता हूँ।" उसने बाण निकाला।

बोधिसत्व ने उसको रोकते हुये कहा—

"राजा! मत मारो। मारने में क्या रखा है? अगर ज़िन्दा रहा तो कभी न कभी उसे अक्ल आयेगी ही। अपनी घोषणा के अनुसार उसको उसका ईनाम दे दो। यही उचित है।"—राजा ने वैसा ही किया।

राजा को तब बोधिसत्व की उदारता और क्षमा का भास हुआ।

# पंडित परिवार

अमरावती नगर में एक गरीब ब्राह्मण परिवार रहा करता था। वह पंडित-परिवार के नाम से प्रसिद्ध था। क्योंकि उस परिवार का मुखिया, उसकी पत्नी, उसका लड़का और बहू सभी पंडित थे। माने हुये कवि भी थे।

गरीबी से वे तंग आये हुये थे। और-जब उनको यह मालूम हुआ कि राजा भोज पंडितों का आदर-सम्मान करता है, तो वे चारों के चारों धारा नगरी गये। जब वे धारा नगरी से थोड़ी ही दूर थे, एक ब्राह्मण ने परिवार के मुखिया से पूछा—"आप कहाँ जा रहे हैं?"

"समस्त, वेद, वेदाँग, पुराणों में पारंगत राजा भोज का दर्शन करने।"—पिता ने कहा।

"वेद, पुराणों की तो बात अलग, राजा भोज ठीक तरह अक्षर भी नहीं पढ़ पाता है। नहीं तो, ब्रह्मा की लिखी हुई, दारिद्र्य रेखा को मेरे ललाट पर पढ़कर भी उसने मुझे इतना धन दिया है।" कहकर वह ब्राह्मण हँसता हँसता वहाँ से चला गया।

यह बात सुनते ही पंडित परिवार को बहुत खुशी हुई। उन्हें मालूम हो गया कि राजा भोज सचमुच महान दानी हैं, और गरीबों के प्रति दया और आदर भी दिखाते हैं। वे सोचने लगे कि उनका भाग्य भी अवश्य खिलेगा।

परदेसी राजा की आज्ञा के बिना नगर में नहीं घुस सकते थे। इसलिये पंडित परिवार ने नगर के बाहर, एक पीपल के पेड़ के नीचे अपना बसेरा किया, और राजा के पास ख़बर पहुँचवाई।

थोड़ी देर बाद, राजा के नौकर ने एक लोटे में दूध लाकर कहा—"राजा ने

श्री दुर्गाशंकर त्रिपाठी
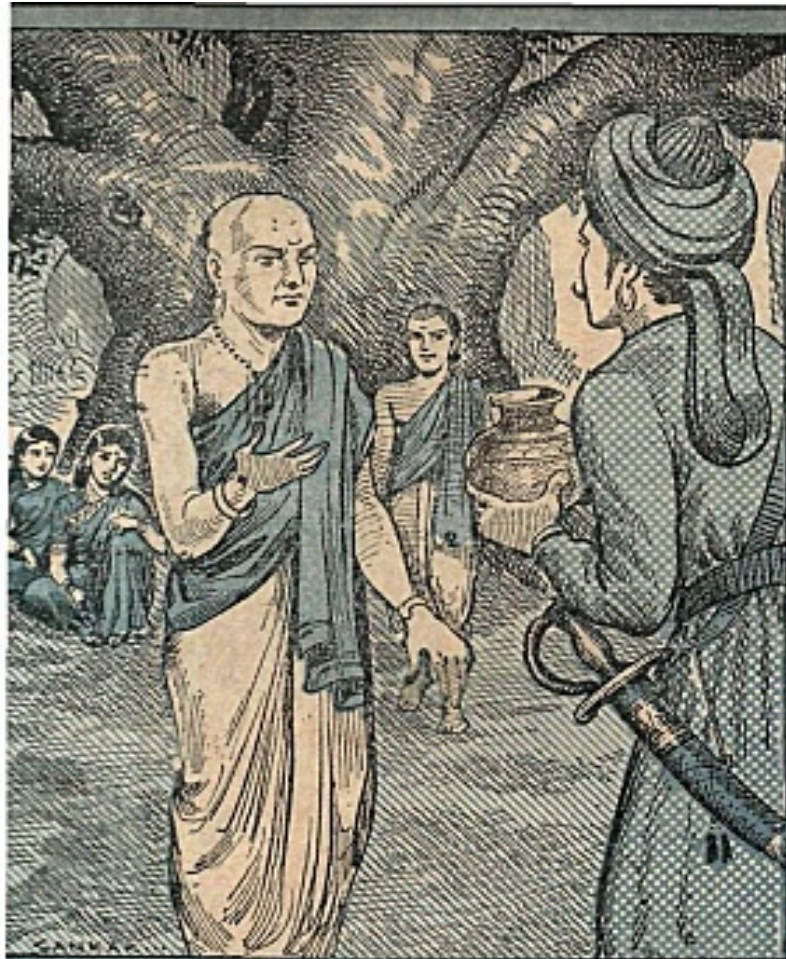
आपको यह देने के लिये कहा है।" उसने लोटा परिवार के मुखिये को दे दिया। और कुछ न कहा।

"हमारे नगर में दूध के समान पंडित हैं, महान विद्वान हैं। भला आपके लिये कहाँ जगह?" यह राजा भोज का मतलब था। ब्रह्माण राजा का मतलब ताड़ गया। उसने दूध में थोड़ा शक्कर मिलाकर नौकर से कहा—"जाओ, इसको ले जाकर राजा को दो।"

"आपके नगर के पंडितों में, हम भी दूध में शक्कर की तरह घुल-मिल जायेंगे। यही नहीं, उनके पांडित्य को मिठास भी देंगे।" यह ब्राह्मण का मतलब था। यह जानकर राजा भोज को सन्तोष हुआ। वे ब्राह्मण की बुद्धिमत्ता सराहने लगे।

फिर भी उसने इस पंडित परिवार की और भी परिक्षा करनी चाही। इसलिये उसने अपने शाही कपड़े निकालकर मामूली कपड़े पहिन लिये, और सूर्यास्त के समय वह पीपल के पेड़ के पास गया। वहाँ राजा भोज को केवल सास और बहू ही दिखाई दीं। यह अनुमान कर कि पिता और पुत्र संध्या करने के लिये नदी किनारे गये हुये होंगे, वह भी वहाँ गया। वहाँ उसे ब्राह्मण का लड़का दिखाई दिया। राजा ने उसकी तरफ़ ऐसे देखा, जैसे कोई प्रश्न पूछ रहा हो। राजा नदी का पानी ओक से पीने लगा।

इस तरह पानी पीने से राजा भोज का मतलब था: "इस तरह समुद्र का पानी पीनेवाले अगस्त्य की तरह तुम भी ब्राह्मण हो न?"

ब्राह्मण ने राजा भोज का अर्थ जान, वेष बदले हुये राजा को इस प्रकार देखा, मानों वह भी एक प्रश्न पूछ रहा हो।

उसने एक पत्थर उठाकर पानी में फेंका। "समुद्र में पहाड़ फेंककर, समुद्र पर पुल बाँधनेवाले रामचन्द्र जी की तरह तुम भी क्षत्रिय हो न?"—यह उसका मतलब था।

राजा भोज यह समझ गया और बहुत सन्तुष्ट हुआ। वह अपने महल में चला गया। परंतु वह इस पंडित परिवार की और परीक्षा करना चाहता था। उनकी कविता-शक्ति को बिना परखे उसको चैन न थी। उसने लकड़हारे का वेष धरा। सिर पर लकड़ियों का गट्ठर रख, नगर के दरवाज़े बन्द कर देने से पहिले वह बाहर आ गया और पीपल के नीचे बैठे हुए पंडित परिवार के साथ जा मिला।

"मुझे जंगल में देर हो गई। नगर के फाटक बन्द कर दिये गये हैं। आप जिस दाम पर चाहे, मेरे लकड़ियों के गट्ठर खरीद लीजिये और मुझे रात भर अपने साथ रहने दीजिये।"—राजा भोज ने परिवार के मुखिया से हाथ जोड़कर प्रार्थना की। ब्राह्मण उसे पहिचान न पाया।

उस ब्राह्मण ने जो थोड़ा बहुत पैसा था, उसको दिया और कहा—"अच्छा, तो

खैर, यहीं ठहरो बेटा! क्या यह हमारे बाप-दादाओं की जगह है?—"

रात में क्योंकि चोरों का डर था, इसलिये सब के सब एक साथ नहीं सोये। एक एक करके उन्होंने पहरा देने का निश्चय किया। पहिली बारी पिता की थी। इसलिये तीनों सो गये।

थोड़ी देर बाद, वेष बदले हुये राजा भोज ने कहा—"असारे खलु संसारे, सारमेतत्रयं स्मृतं"। यानी, इसका मतलब था—"इस निस्सार संसार में तीन ही चीज़ों को सारवान् कहा गया है।"
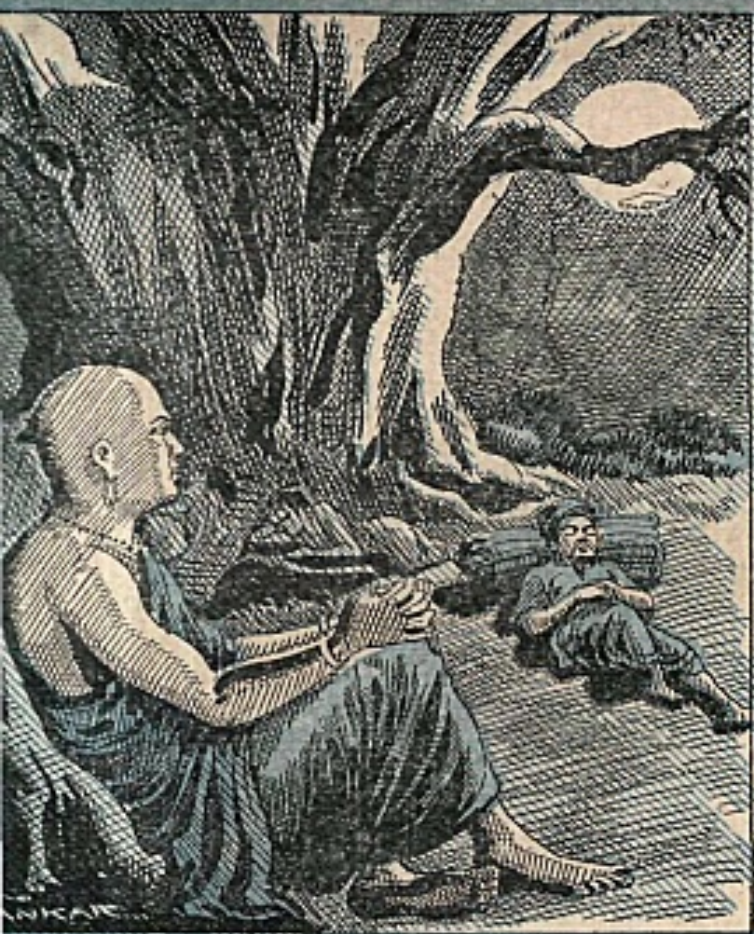
यह सुन जागे हुये ब्राह्मण ने कहा—"काश्यां वासः सतां सेवा, मुरारे स्मरणं तथा।" इसका अर्थ है—"काशी में रहना, सज्जनों की सेवा करना, भगवान का नाम स्मरण करना।"

भोजराज यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ और बिना कुछ कहे, सो गया। फिर एक पहर खतम होने के बाद, ब्राह्मण ने अपनी पत्नी को जगाया और स्वयं सो गया।

थोड़ी देर बाद राजा भोज गुन गुनाने लगा! "असारे खलु संसारे सारमेतद्द्वयं स्मृतं"। इस निस्सार संसार में दो ही सारवान् वस्तु समझी जाती हैं।

यह सुन ब्राह्मण की पत्नी ने कहा—"कसार श्शर्करा युक्तः कंसारि चरण द्वयं" अर्थात् मीठे से बने पकवान और कृष्ण के पैर।

तीसरे पहर जब ब्राह्मण का लड़का पहरा दे रहा था, तब राजा भोज ने फिर यों कहा—"असारे खलु संसारे सारं श्वशुर मन्दिरं"। अर्थात् इस निस्सार संसार में सारवान ससुर का घर है।

तब ब्राह्मण के लड़के ने इस समस्या का यों हल किया—"हरिश्शेते हिमगिरौ, हरि-

श्शेते पयोनिधौ "। शिव अपने ससुर के घर हिमालय पर लेटा हुआ है और विष्णु अपनी ससुराल दुग्ध सागर में लेटा हुआ है।. शिव की पत्नी पार्वती, हिमालय की पुत्री है, विष्णु की पत्नी लक्ष्मी दुग्ध सागर में पैदा हुई थी।

यह सुनकर राजा भोज के सन्तोष की सीमा ही न रही। क्योंकि चौथी बारी बहु की थी, उसके उठते ही राजा भोज ने कहा—" असारे खलु संसारे सारं सारंगलोचना "। अर्थात्, इस निस्सार संसार में स्त्री ही एक सार है।

यह सुन ब्राह्मण की बहू ताड़ गई कि यह लकड़हारा राजा भोज ही है। उसने यों जवाब दिया—" यस्याः कुक्षौ समुत्पन्नो, भोजराज भवादृशः "। " हे राजा भोज! जिस स्त्री की कोख से आप जैसे व्यक्ति पैदा हों, वह स्त्री ही इस निस्सार संसार में सारवती है। " यह बात कान में पड़ते ही, राजा भोज, झट उस अन्धेरे में ही अपने महल में चला गया। उसे उनकी और परीक्षा लेने की आवश्यकता न थी।

सवेरे होते ही, पंडित परिवार को दरबार से निमन्त्रण पहुँचा। निमन्त्रण को पाकर पंडित परिवार का हर सदस्य बहुत प्रसन्न हुआ। वे समझ गये कि राजा भोज वेष बदलकर उनकी परीक्षा लेने के लिये आया था, और परीक्षा में वे उत्तीर्ण हुये। सब तुरन्त दरबार में गये।

राजा भोज ने पंडित परिवार की बड़े आदर के साथ आवभगत की। उसने उनकी प्रशंसा की, और कहा कि पंडित परिवार का हर सदस्य समानरूप से पंडित था।

बाद में उसने उनको माहवारी वेतन पर अपने दरबार में रख लिया।

उन दिनों तक्षशिला का राजा कलिंगदत्त था। वह बौद्ध धर्मावलम्बी था। परन्तु उसके राज्य में वैदिक धर्म के अनुयायी भी काफ़ी थे। राजा उनको बौद्ध-मत स्वीकार करने के लिये बाधित भी न करता था। पर जो कोई उसके पास बौद्ध-धर्म के बारे में जानने के लिये आता तो वह उसे बुद्ध का उपदेश दिया करता।

इस प्रकार बौद्ध-मत को स्वीकार करनेवालों में वितस्तादत्त नाम का एक रईस भी था। परन्तु उसके लड़के, रत्नदत्त को वैदिक धर्म में ही विश्वास था। इसलिये वह हमेशा पिता को डाँटता-डपटता रहता।

"तुम पापी हो। इसीलिये तुमने वैदिक-धर्म छोड़ दिया। ब्राह्मणों की पूजा छोड़ बौद्ध भिक्षुओं की पूजा कर रहे हो। भला तुम पर भी ऐसे वाहयात धर्म का क्या जादू है, जिसको माननेवाले या तो सिर घुटाकर, मैले-कुचले कपड़े पहिन, भिखारी बने फिरते हैं, या ऐरे-गैरे सब मिल-मिलाकर, मठ में आराम से रहते हैं; न कोई जात, न धर्म, न पूजा-पाठ।

लड़के की बात सुन, पिता सहम उठता और कहा करता—"बेटा! तुम बाह्य आडम्बर को ही धर्म समझे बैठे हो! क्या जन्म से ब्राह्मण होते हैं? क्या वे ब्राह्मण नहीं हैं, जिन्होंने क्रोध आदि को छोड़ दिया हो, सत्य अहिंसा का निष्ठा के साथ पालन कर रहे हों? क्यों इस धर्म की तुम निंदा करते हो, जो प्राणी मात्र को अभय-प्रदान करता है?"

परन्तु रत्नदत्त को पिता की एक बात भी अच्छी न लगी। वह पिता को नीच

कुमारी विमला माथुर

और तुच्छ समझने लगा। पिता-पुत्र में क्योंकि प्रेम घट गया था, इसलिये उनका पारिवारिक जीवन भयंकर हो गया था। रत्नदत्त ने व्यापार आदि में, पिता की सहायता करना छोड़ दिया। इसलिये तंग हो वितस्तादत्त ने राजा के पास जाकर अपने लड़के की बात कही।

सब सुनने के बाद राजा ने कहा—

"किसी न किसी बहाने अपने लड़के को कल दरबार में लाना। जो कुछ करना होगा, तभी मैं सोच-साचकर करूँगा....!"

व्यापारी अपने लड़के को अगले दिन दरबार में ले गया। राजा ने इस प्रकार अभिनय किया, मानों वह बहुत क्रुद्ध हो। उसने सैनिकों को आज्ञा दी—"इस पापी देशद्रोही का तुरंत सिर काट दो!"

रत्नदत्त मारे भय और आश्चर्य के परेशान हो गया। उसका पिता राजा के सामने गिड़गिड़ाने लगा—"महाराज! जल्दी मत कीजिये। ठीक सोच-साचकर, जो कुछ आपको करना है, कीजिये।"

"अच्छा, तो दो महीने तक इसका सिर न काटो। दो महीने बाद इसको
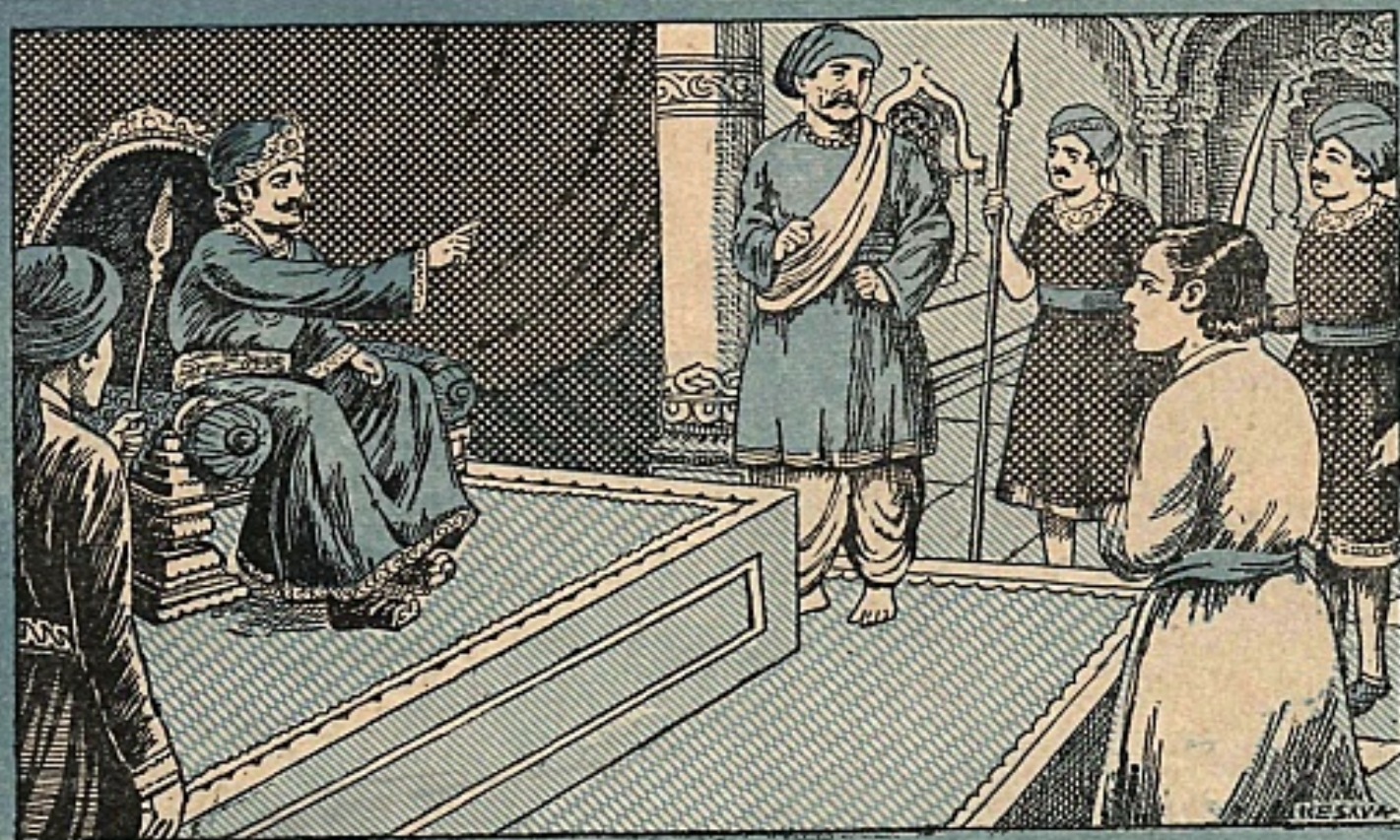
हमारे सामने उपस्थित करो। अब इसे घर ले जाओ!"—राजा ने कहा।

रत्नदत्त घर पहुँचकर सोचने लगा—"मैंने राजा का क्या अपकार किया है? वह मुझे क्यों मरवा रहा है? उसने बहुत कुछ सोचा, पर कुछ सूझा नहीं। राजा के दिये हुये दण्ड के कारण उसकी हालत बुरी हो गई। वह व्यथित और विह्वल हो गया था। उन दो महीनों में, न उसने कभी ठीक खाना ही खाया, न सोया ही। वह सूखकर काँटा हो गया।

दो महीने पूरे हो जाने के बाद व्यापारी ने अपने लड़के को राजा के सामने हाज़िर किया। रत्नदत्त को देखते ही राजा ने पूछा—"अरे, यह क्या? तुम तो मुरदे की तरह हो गये हो? क्या भोजन नहीं कर रहे हो? मैंने तुम्हें भोजन न करने के लिये तो नहीं कहा था!"

"महाप्रभू! जबसे आपने मुझे मरण-दण्ड दिया है, मुझे तो ऐसा लग रहा है, मानों खाने, पीने, सोने से भी मुझे मना कर दिया हो। मौत के भय से ही मैं इस प्रकार हो गया हूँ।"—रत्नदत्त ने जवाब दिया।

"अच्छा तो, अब जान गये, मौत का भय क्या होता है? ज़िन्दगी कितनी प्यारी होती है? हर प्राणी की भी तो ज़िन्दा रहने की इच्छा होती है। अब तुम ही बताओ, उन प्राणियों की रक्षा करनेवाला कौन-सा धर्म हो सकता है?"—राजा ने कहा।

रत्नदत्त की आँखें खुलीं। उसे बुद्धि आई। वह तुरंत राजा के पैरों पड़ गया, और उसे बौद्ध-धर्म के बारे में उपदेश देने के लिये कहा। कलिंगदत्त ने रत्नदत्त को बौद्ध-धर्म की दीक्षा दी।

[१८]

[ ध्वंसावशेष नगर से भागते भागते व्याघ्रदत्त और समरसेन का एकाक्षी से सामना हो गया था न ? तब समरसेन मांत्रिक की नज़र बचाकर भाग गया था। एकाक्षी को विश्वास हो गया कि दुश्मन के साथी समरसेन को मारने के लिये व्याघ्रदत्त की सहायता बहुत उपयोगी होगी। बाद में......! ]

व्याघ्रदत्त से मान्त्रिक एकाक्षी ने सारी परिस्थिति मालूम कर ली। वह यह जान गया कि उसकी तरह वह भी धन-राशि से भरी नाव के लिये प्रयत्न कर रहा था।

"क्या तुम्हें मालूम है कि धन-राशि से भरी नाव को पा लेना मनुष्य के बस की बात नहीं है?"—एकाक्षी ने व्याघ्रदत्त से पूछा।

सिर हिलते हुये व्याघ्रदत्त ने जवाब दिया—"शाक्तेय का त्रिशूल जो है?"

शाक्तेय के त्रिशूल का नाम सुनते ही एकाक्षी चौकन्ना हो गया। उसका ख्याल था कि सिवाय उसके और चतुर्नेत्र के कोई भी त्रिशूल के बारे में कुछ न जानता था।

प्राण के भय से व्याघ्रदत्त ने साफ़ साफ़ कह दिया कि ध्वंसावशेष नगर के, हाथियों के जङ्गल में, विष वृक्ष से सौ गज़ दूर, गुरु-द्रोही के अस्थि-पंजर में त्रिशूल रखा हुआ है। जब व्याघ्रदत्त ने यह बताया

कि शिवदत्त भी उसकी खोज कर रहा है, और समरसेन भी खोजता खोजता वहाँ पहुँच गया होगा, तब एकाक्षी गुस्से के कारण लाल पीला होने लगा।

"व्याघ्रदत्त! इस काम को करने के लिये हमें एक दूसरे की मदद करनी होगी। चतुर्नेत्र नाम का एक छोटा-मोटा मान्त्रिक इस बात में समरसेन की मदद कर सकता है। इसलिये अच्छा है, हम पहिले खँडहरवाले नगर में पहुँचे जायँ। आओ, आगे आगे रास्ता दिखाओ।"— एकाक्षी ने कहा।

आगे आगे व्याघ्रदत्त और उसके सैनिक चलने लगे; पीछे पीछे एकाक्षी अपने अनुचरों के साथ जाने लगा। कुछ दूर जाने के बाद एकाक्षी ने अपने अनुचरों को देखकर आज्ञा दी—"कपाल! कालभुजंग! तुम पहिले जाकर समरसेन को ढूँढ निकालो।"

उनके जाने के थोड़ी देर बाद ही व्याघ्रदत्त को उल्लू का चीत्कार सुनाई दिया। वह घबरा गया। एकाक्षी के सिर पर मँडराता हुआ उल्लू चिल्लाने लगा—"चतुर्नेत्र एकाक्षी, एकाक्षी।"

एकाक्षी भी भय से काँपने लगा। उसने बायें हाथ से आँखें मूँदीं और दायें हाथ से हवा में तलवार घुमानी शुरू की। कँपती आवाज़ में चिल्लाने भी लगा—"कपाल, कालभुजंग।" उसके बहुत चिल्लाने पर भी उसके अनुचर पास न आये। वह अभी सोच ही रहा था कि क्या किया जाय कि इतने में उल्लू वहाँ से उड़ गया।

व्याघ्रदत्त और एकाक्षी ने हाथियों के जंगल में प्रवेश किया। तब व्याघ्रदत्त ने एकाक्षी से कहा—"एकाक्षी महाशय! यही हाथियों का जङ्गल है। यह विष वृक्ष ऐसा लगाता है, मानों इसका हर पत्ता

नाग की तरह फ़ण उठाकर फूँकार रहा हो। यह जो सामने समाधि दिखाई दे रही है, इसी के नीचे शाक्तेय का त्रिशूल है।"

यह सुन एकाक्षी अत्यन्त प्रसन्न हुआ। "अच्छा, व्याघ्रदत्त! तुम अपने सैनिकों के साथ शिवदत्त का मुकाबला करो।" उसने व्याघ्रदत्त का हौसला भी बढ़ाया।

व्याघ्रदत्त ने न आगे देखा, न पीछे। इने-गिने अपने सैनिकों के साथ शिवदत्त के अनुयायियों पर कूद पड़ा।

शिवदत्त के अनुयायी, संख्या में व्याघ्रदत्त के सैनिकों से तिगुने थे। इस कारण से व्याघ्रदत्त के सैनिक एक एक करके उनकी तलवारों के शिकार होने लगे।

यह देखकर एकाक्षी को आनेवाले ख़तरे के बारे में आशंका होने लगी। वह चिल्लाने लगा—"कपाल....! कालभुजंग....!!" देखते देखते वहाँ कपाल और कालभुजंग आ पहुँचे। शिवदत्त के अनुयायी उनको देखते ही सिर पर पैर रखकर भागने लगे।

"व्याघ्रदत्त! हमारे लिये अच्छा मौका है। खोद-खादकर जल्दी पता लगाओ कि शाक्तेय का त्रिशूल कहाँ रखा हुआ है।"—एकाक्षी ने कहा।

दिया। एकाक्षी ने पीछे मुड़कर देखा। चतुर्नेत्र का अनुचर नर-वानर उसे हाथ से पकड़कर घुमा रहा था। उल्लू "एकाक्षी एकाक्षी" चिल्लाता विषवृक्ष की ओर चला आ रहा था।

एकाक्षी घबरा गया। इससे पहिले कि वह शाक्तेय का त्रिशूल ले सकता, चतुर्नेत्र और सैनिकों को लेकर समरसेन वहाँ पहुँच सकता था। वह डरने लगा। उसने काल भुजंग को बुलाकर नर-वानर से भिड़ने के लिये कहा। दूर पत्थरों पर व्याघ्रदत्त को फेंककर नर-वानर कालभुजंग से मुकाबला करने लगा। इधर उल्लू भी कपाल से लड़ने लगा।

एकाक्षी का भय सच निकला। चतुर्नेत्र "उलूका, नर-वानर" कहता कहता वहाँ आ ही गया। समरसेन के साथ कुछ सैनिक भी थे। भागते हुये शिवदत्त और उसके अनुचर भी फिर उसी तरफ़ चले आ रहे थे। बचे-खुचे व्याघ्रदत्त के सैनिक उनको रोक रहे थे।

काल भुजंग के जहरीले दान्तों से बचते हुये, नर-वानर एक बड़े पत्थर से उसे मारने लगा। उल्लू भी कपाल के पंजे से बच बच कर उसको काटने नोचने लगा।

व्याघ्रदत्त को भी विश्वास हो गया कि उसी की विजय अवश्य होगी। समरसेन और चतुर्नेत्र के वहाँ आने से पहिले ही वह त्रिशूल हथिया सकेगा। उसने अपने सैनिकों को एकत्रित किया और आगे कूदकर स्वयं मृतवीरों की सामाधि खोदने लगा। मगर विष-वृक्ष से किसी के कराहने की ध्वनि आने लगी। फ़ण उठाये साँप की तरह उस वृक्ष के पत्ते फूँकारने लगे।

एकाक्षी पेड़ के पास गया। तल्वार उठाकर, वह अभी मन्त्र पढ़ ही रहा था कि उसको व्याघ्रदत्त का आर्तनाद सुनाई

कहीं ऐसा न हो कि मामला और बिगड़ जाय, एकाक्षी तलवार लेकर चतुर्नेत्र पर कूदा। चतुर्नेत्र भी बिना किसी डर के उसका मुकाबला करने लगा। इस बीच में, चतुर्नेत्र की सलाह पर समरसेन सैनिकों को साथ लेकर समाधि खोदने लगा।

जब वह मृत वीरों की समाधियाँ खोद रहा था, तब समरसेन को अन्दर से विचित्र प्रकार का अट्टहास और रुदन सुनाई देने लगा।

समरसेन डरा नहीं। अपने सरदार का साहस देखकर जैसे तैसे सैनिकों ने समाधियाँ खोद डालीं।

समाधि के नीचे एक ही एक अस्थि-पंजर था। समरसेन ने अनुमान किया कि वह गुरु-द्रोही का ही अस्थि-पंजर था। उस अस्थि पंजर की छाती पर, शाक्तेय का त्रिशूल गड़ा हुआ दिखाई दिया। काँपते हाथों से समरसेन ने अस्थि-पंजर में से त्रिशूल बाहर निकाला। तुरंत अस्थि-पंजर हवा में उठा और चक्कर काटने लगा। "गुरु शाक्तेय! आज से मैं शाप विमुक्त हो गया हूँ। मैं फिर शमन द्वीप को चला जा रहा हूँ।"— कहता कहता वह वहाँ से उड़ गया।

अस्थि-पंजर को, उस तरह उठकर आकाश में उड़ता देख, सब का कलेजा थम-सा गया। तलवार हाथ में लिये एकाक्षी उड़ते हुये अस्थि-पंजर की ओर ताकने लगा। लड़खड़ाता हुआ समरसेन चतुर्नेत्र के पास पहुँचा और उसके हाथ में अपूर्व शक्तिवाले शाक्तेय के त्रिशूल को सौंप दिया।

जब एकाक्षी की नज़र अस्थि-पंजर से चतुर्नेत्र की ओर गई तो उसको चमकता हुआ त्रिशूल दिखाई दिया। उसके मुख से चीख निकली।—"कालभुजंग, कंकाल!" कहता कहता वह वहाँ से भागने लगा।

CHITRA

"चतुर्नेत्र, उस पापी को ज़िन्दा न जाने दो। उसको तुरंत मार डालो!"—समरसेन ने कहा। तब चतुर्नेत्र ने हँसते हुये बताया—"समरसेन! वह एकाक्षी कहीं न जा सकेगा। हम जब चाहे तब, चाहे वह कहीं भी छुपा हुआ हो, इस त्रिशूल द्वारा उसे मार सकते हैं।" उसने एकाक्षी की ओर त्रिशूल फेंकते हुये कहा—"गुरुद्रोही के इस भाई को मार डालो।"

त्रिशूल विद्युत की तरह हवा में उड़ा। देखते देखते, भागते हुये एकाक्षी के पास पहुँचा और ज़ोर से उसकी छाती में घुस गया। "हाय मरा!" चिल्लाता, चिल्लाता, एकाक्षी नीचे गिर गया। दूसरे क्षण त्रिशूल चतुर्नेत्र के पैरों के पास आकर गिर पड़ा।

"चतुर्नेत्र! एक और काम। इस कपाल और कालभुजंग को भी खतम करो।"—समरसेन ने उत्साह से कहा।

"एकाक्षी के मरने के बाद ये कपाल और कालभुजंग किसी का नुकसान नहीं कर सकते।" चतुर्नेत्र ने कहा।

तब चतुर्नेत्र ने कहा—"समरसेन हमें यहाँ समय नहीं खराब करना चाहिये। तुरंत हमें पूर्वी किनारे पर पहुँचकर धन-राशि से भरी नाव पर अधिकार कर लेना चाहिये।"
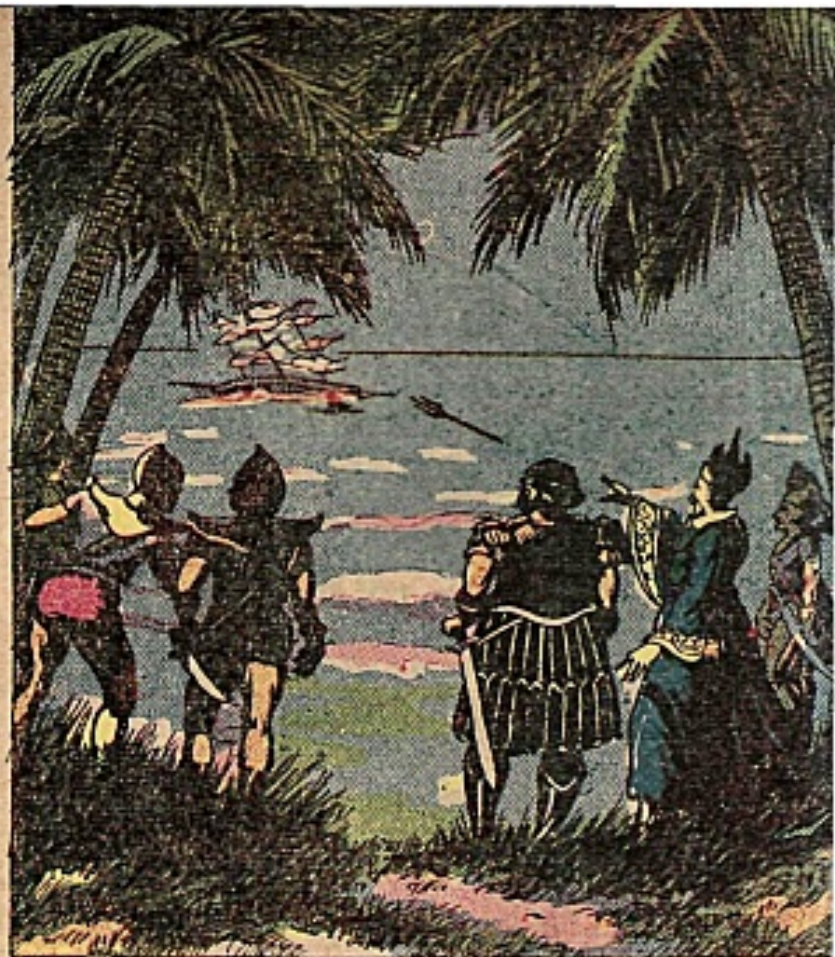
जंगली रास्तों से पहाड़, घाटी पारकर वे पूर्वी किनारे पर पहुँचे। धन-राशि से भरी नाव, और उसका पहरा देनेवाली नाग-कन्या, हमेशा की तरह समुद्र में तैरती-डूबती नज़र आयीं।

चतुर्नेत्र ने शाक्तेय के अपूर्व शक्तिवाले त्रिशूल को नाव की तरफ़ फेंका। त्रिशूल अग्नि की तरह नाव पर लगा। तुरंत नाग-कन्या ने नाव को किनारे पर लगाया।

"मैं शमन द्वीप के राजा शाक्तेय का शिष्य हूँ। यह मन्त्र-शक्ति से पूर्ण उसका त्रिशूल है। गुरु की आज्ञा तो जानती ही हो। तुम आज से मेरी पत्नी हो।"—चतुर्नेत्र ने नाग-कन्या से कहा।

चतुर्नेत्र की यह बात सुनते ही, नाग-कन्या नाव छोड़कर चतुर्नेत्र के पास खड़ी हो गई। दोनों का पाणिग्रहण हुआ। समरसेन और उसके सैनिकों ने उनका जय जयकार किया। तब चतुर्नेत्र ने समरसेन की ओर मुड़कर कहा—

"आज से हम पति-पत्नी हैं। इस मन्त्र-वाले द्वीप में आराम से हम समय बिताना चाहते हैं। समरसेन! जिस काम पर तुम आये थे, वह भी हो गया है। धन-राशि के साथ तुम भी कुण्डलिनी द्वीप वापिस जा सकते हो।"

झट समरसेन यात्रा की तैयारी करने लगा। उसने चतुर्नेत्र को नमस्कार कर अपनी कृतज्ञता प्रकट की। चतुर्नेत्र ने उसको आशीर्वाद दिया और नाग-कन्या के साथ वह जंगल में चला गया।

यह सोचकर कि भयंकर हिंसक जन्तुओं से भरा भूकम्पोंवाला "मन्त्रद्वीप" उनके रहने योग्य नहीं है, शिवदत्त और उसके अनुयायी भी समरसेन के साथ कुण्डलिनी द्वीप के लिये रवाना हुये। निर्मल, शान्त समुद्र में एक मास यात्रा कर, एक दिन प्रात:काल को सब के सब कुण्डलिनी द्वीप पहुँचे।

कुण्डलिनी द्वीप के राजा चित्रसेन, प्रजा और सैनिकों ने समरसेन का खूब स्वागत किया, क्योंकि बहुत सालों बाद वह स्वदेश लौटा था। वह न स्वयं जीते जी आया था, आपितु धनराशि से भरी नाव भी लाया था—इसलिये सबको परमानन्द हुआ।

[समाप्त]

एक गाँव में कोई ग्वाला रहा करता था। उसके पास चार पाँच सौ बकरियाँ तो थीं, पर एक इन्च अपनी ज़मीन न थी। यह सोचकर कि बकरियाँ फ़सल खायेंगी, गाँव के किसानों ने ग्वाले से कहा—"तुम गाँव में कम से कम दो बीघे ज़मीन खरीदो। वरना तुम गाँव में न रह पाओगे।"

ग्वाला बिचारा क्या करता? उसने गाँव के बाहर सिर्फ़ दो ही दो बीघे खरीदे। उसने उसमें जौ बोई। वह भी ठीक हुई।

थोड़े दिनों बाद ग्वाले की नज़र भी कम हो गई। ज़मीन का काम ग्वाले के लड़के के जिम्मे पड़ा। उसने भी पिता की तरह ज़मीन में जौ बोई।

खैर, इधर, धान्य लक्ष्मी, धन लक्ष्मी, धैर्य लक्ष्मी, "मैं बड़ी हूँ" कहती कहती लड़ती-झगड़ती जौ के खेत में आईं।

"इस ग्वाले के लड़के को देखो। थोड़ी-सी ज़मीन में कितनी ही मेहनत कर रहा है, पर कुछ फलता नहीं। अगर मैं इसके खेत में जाकर बैठ गई तो इसके सब कष्ट मिट जायेंगे।" कहती हुई धान्य लक्ष्मी ने खेत में प्रवेश किया।

"इसके कष्ट तू क्या हटा सकेगी? इसका वास्तव में फ़ायदा तो मैं करूँगी।" कहती हुई धन लक्ष्मी पैसे की गठरी का रूप धर गाँव के रास्ते में बैठ गई।

"अरे अरे! तुम भी क्या पगली हो गई हो? अगर मैं इसके सिर पर जा बैठी तो चाहे तुम कुछ भी करो, इसका कोई फ़ायदा न होगा।" कहती हुई धैर्य लक्ष्मी उसके सिर पर जा बैठी।

धान्य लक्ष्मी के खेत में घुसते ही—फ़सल बहुत बढ़ गई। परन्तु धैर्य लक्ष्मी

श्री कपूरचन्द जैन

के सिर पर सवार होने के कारण ग्वाले ने सोचा कि उस तरह के फ़सल के कारण खेत ही खराब हो जायेगा ।

यह बात पिता से कहने के लिये वह घर की तरफ़ गया । जब वह उस जगह पहुँचा, जहाँ धन लक्ष्मी पैसों की गठरी के रूप में पड़ी थी, उसे सूझा—“ क्यों न आँखें बन्द कर चला जाये । देखें, कितनी दूर जा सकता हूँ । ” यह सोचकर, गठरी पार कर जब तक वह २० फीट नहीं चला गया, उसने आँखें न खोलीं । उसने पिता से कहा कि देखते देखते सारी फ़सल खराब हो गई है । उसने ज़मीन बेच देने की ज़िद की । मगर पिता ने कहा कि उसे कोई खरीदेगा नहीं । जब निराश हो ग्वाले का लड़का खेत वापिस पहुँचा तो कोई व्यापारी उस खेत की ओर लगातार देख रहा था ।

वह व्यापारी किसी और देश का था । उसने इस तरह की जौ की फ़सल कहीं न देखी थी । जब ग्वाले का लड़का मचान पर चढ़ रहा था तो व्यापारी ने पूछा—“ क्यों भाई यह तुम्हारा खेत है ? ” लड़के ने कहा—“ हाँ ”

“ क्या खेत बेचोगे ? ”—व्यापारी ने पूछा । क्योंकि वह अच्छे दाम दे रहा था, लड़का मान गया । कुछ भी हो, अपना अधिकार दिखाने के लिये, धन लक्ष्मी उस लड़के की सहायता करने लगी ।

उसने व्यापारी के दिमाग में भी एक और ख्याल सुझाया । उसकी प्रेरणा के अनुसार व्यापारी ने कहा—“ अरे लड़के ! अब तुम्हारे पास तो ज़मीन रही नहीं । मेरे पास ही नौकरी कर लो । तीस रुपये माहवार दूँगा । जो मैं कहूँ सो करना । ”

ग्वाले का लड़का मान गया । व्यापारी ने अपनी गाड़ियों पर से और सब समान

नीचे फिकवा दिया और उन पर जौ के पौधे कटवाकर रखवा लिये।

लड़के को साथ लेकर चल दिया। जाते जाते वे एक शहर में पहुँचे। व्यापारी ने उस नगर के राजा के पास जाकर कहा—"देखा अपना यह जौ का गट्ठर? इस प्रकार की जौ संसार में कहीं नहीं है। आपने इसको अपने राज्य में लगवायी तो आनाज़ की कमी ही नहीं होगी। अगर आपने हौदा लगे हुये हाथी को दिया तो गाड़ी भर जौ के अंकुर दे जाऊँगा।" राजा मान गया। व्यापारी ने एक गाड़ी जौ व्यापारियों को बेचकर ग्वाले से गोटेदार कपड़े सिलवाकर दिये। उसको हाथी पर चढ़ाकर कुछ दिनों बाद वह एक और शहर में पहुँचा।

रास्ते भर व्यापारी कहता आया कि हौदे पर बैठा हुआ व्यक्ति सोने का महाराजा है और स्वयं वह उसका मन्त्री है। इसलिये उस नगर के राजा ने ग्वाले के लड़के का राजोचित स्वागत-सम्मान किया और एक सुन्दर महल में उनके रहने का प्रबन्ध किया।

व्यापारी ने जौ के बारे में सबसे कहा—"हमारे सोने के महाराज के राज्य में

खराब से खराब ज़मीन में भी इस तरह की जौ पैदा होती है। इसीलिये इनके राज्य में सिवाय सोने के और कुछ नहीं दिखाई देता।"

राजा और रानी ने सोचा कि यदि इस मन्त्री को मना लिया गया तो इस महाराजा का विवाह अपनी लड़की से कर सकते हैं। उन्होंने मन्त्री को बुलाकर यह बात उससे कही। उसने कहा—"मैं महाराजा से कह कर देखूँगा"।

जब महल में जाकर व्यापारी ने यह बात छेड़ी तो ग्वाले का लड़का घबरा गया। वह कहने लगा—"राजकुमारियाँ तो चुड़ैल होती हैं। मैं उनसे नहीं निभा सकता।"

"अरे पागल! मालूम है, तुम मेरे नौकर हो? जो मैंने कहा अगर तुमने नहीं किया तो हड्डी-पसली एक कर दूँगा। समझे?" व्यापारी आग बरसाने लगा। उसने राजा के पास जाकर विवाह का मुहूर्त भी निश्चित करवा दिया। परन्तु उसने कहा कि विवाह उनके देश की परम्परा के अनुसार ही होना चाहिये। राजा ने कोई आपत्ति न की।

मुहूर्त के समय, जब दूल्हे को लेने के लिये पालकी उसके महल पर भेजी गई, तो नौकरों ने उसको बाँधकर पालकी में रख दिया।

राजा और रानी ने सोचा—"शायद यह इनके देश की परम्परा है।

विवाह के समाप्त होते ही दूल्हे को शयनकक्ष में ले जाया गया।

"कमरे के बाहर तलवार लेकर दो सैनिकों को तैनात कीजिये। जब जब दूल्हे कमरे से बाहर आये, तब तब उसे तलवार से भोंकने का वे अभिनय करें।"—व्यापारी ने कहा। राज-परिवार ने सोचा, शायद वह भी उनके देश की एक रीति होगी।

ज्योंही ग्वाले का लड़का शयनकक्ष में घुसा, वह काँपने लगा। "अरे, बाप रे बाप! यह काली माई का कोई मन्दिर है। बलि देने के लिये ही मुझे यों सजाया गया है।"—वह सोचने लगा। उसने भागना चाहा, पर बाहर तलवार लिये सैनिक पहरा दे रहे थे।

इस बीच में राजकुमारी ने शयनकक्ष में प्रवेश किया। तलवार लिये हुये सैनिक चले गये। गहनों से चमकती हुई राजकुमारी को देखकर, वह सोचने लगा—"अरे, बाप रे बाप! अब क्या होगा मेरा? काली माई ही मुझे खाने के लिये स्वयं चली आ रही है।" वह घबरा गया। उसने राजकुमारी को एक धक्का दिया और सीधा अपने महल की ओर भाग गया।

उसे देखते ही व्यापारी आग-बबूला हो उठा। "अरे बेवकूफ़! तेरी शादी एक राजकुमारी से करवाई और तू भागा आ रहा है। अक्ल है कि नहीं?" उसने ग्वाले के लड़के को खूब पीटा।

अगले दिन राजा ने व्यापारी को बुलाकर पूछा—"क्या बात है मन्त्री जी? आपके राजा हमारी लड़की को धक्का देकर चले गये। हम से क्या अपराध हुआ है?"

"अपराध तो कुछ भी नहीं हुआ है। रात मूसलाधार वर्षा हुई थी। ऐसा समय अच्छा नहीं समझा जाता है, इसलिये हमारे राजा नाखुश होकर चले गये।"—व्यापारी ने कहा। बिना यह जाने कि रात को वर्षा हुई थी कि नहीं, राजा ने पुरोहितों को कोड़े लगवाये। "अच्छा मुहूर्त सोचकर बताओ।"—राजा ने उन्हें आज्ञा दी।

उन्होंने रोते-धोते कहा—"क्षमा कीजिये। आज रात को अच्छा मुहूर्त है।"

दूसरी रात को भी ग्वाले का लड़का पहिले की तरह शयनकक्ष से भाग आया;

और व्यापारी ने फिर उसकी खूब मरम्मत की। "यह अपराध तूने दूसरी बार किया है। अगर तू फिर भाग कर आया तो तेरा सिर कटवा दूँगा।"—व्यापारी ने कहा।

परन्तु उसने राजा के पास जाकर कहा—"पुरोहित एकदम बेअक्ल हैं। कल रात भी खूब वर्षा हुई थी।"

पुरोहितों को फिर कोड़े लगाये गये। "महाराज! क्षमा कीजिये। हमें भी सन्देह था कि कल रात का मुहूर्त उतना अच्छा न था। आज रात तो बहुत अच्छी है।"

तीसरे दिन फिर ग्वाले के लड़के को शयनकक्ष में प्रवेश कराया गया। यह सोचकर कि उसकी मौत—"काली माई" के हाथ से, नहीं तो व्यापारी के हाथ से बदी है, वह काँपता काँपता बैठ गया। "अब तो तुम दोनों की पोल खुल गई।"—धैर्य लक्ष्मी ने बाकी दोनों लक्ष्मियों से पूछा। यह कहते कहते वह ग्वाले के लड़के के सिर पर से उतर आई। तुरंत जो कुछ भय या सन्देह ग्वाले के लड़के के मन में थे, काफूर हो गये। उसमें धैर्य और साहस आ गया। "यह व्यापारी कितना भला आदमी है। मुझे पागल की तरह व्यवहार नहीं करना चाहिये। मुझे राजा की तरह रहना चाहिये। यह क्या मैं उसकी पोल खोलने के लिये उतारू हो रहा हूँ?"

जब इस बार राजकुमारी आई तो उसने उठकर उससे हालचाल पूछे। राजकुमारी को बड़ी खुशी हुई।

अन्त में, धैर्य लक्ष्मी के अनुग्रह से, ग्वाले का लड़का राजा भी बन गया। व्यापारी मन्त्री बना।

तब से धैर्य लक्ष्मी के रास्ता दिखाये बग़ैर धान्य लक्ष्मी और धन लक्ष्मी कहीं नहीं जाते।

# चोर का पता
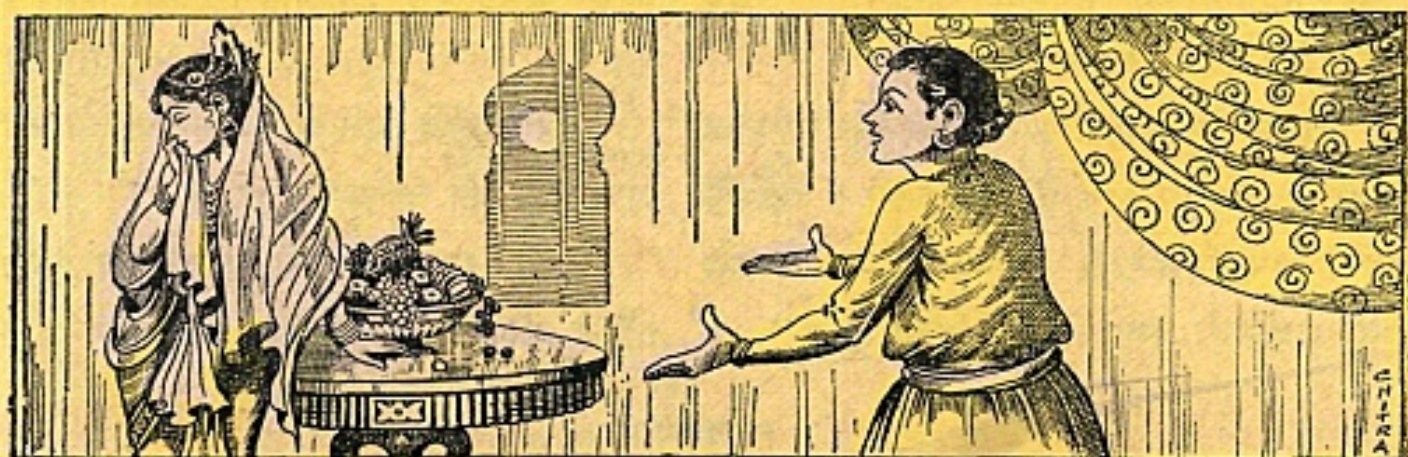
जब प्रसेनजित् श्रावस्ती का राजा था, दूर देश से एक ब्राह्मण नगर में रहने आया। सौभाग्य से एक धनी वैश्य व्यापारी के यहाँ उसको आश्रय मिल गया। वस्त्र, अन्न आदि के अतिरिक्त उसको खूब दान-दक्षिणा वगैरह भी मिलती थी। अकेला तो था ही, इसलिये खर्च कम था। उसने सौ मोहरें खरीदकर जमा कर लीं। उनको हिफ़ाज़त से रखने के लिये उसने उन्हें जंगल में एक जगह गाड़ दिया। न पत्नी-परिवार था, न भाई-बहिन ही; सम्बन्धी भी न थे, इसलिये उस ब्राह्मण के प्राण हमेशा उन मोहरों पर ही रहते। वह रोज़ जंगल जाया करता और अपने धन को देखकर आया करता।

एक दिन जब वह जंगल में गया तो वहाँ मोहरें न थीं। कोई उन्हें निकाल कर चम्पत हो गया था! ब्राह्मण पागल-सा हो गया। रोता-पीटता शहर में पहुँचा। जो कोई मिला, उससे उसने अपनी मुसीबत कह सुनाई। किसी को न सूझा कि उसको कैसे दिलासा दिया जाय!

"जब मेरा पैसा ही चला गया तो मेरे जीने से ही क्या फ़ायदा? नदी में जाकर आत्म-हत्या कर लूँगा!" कहता कहता ब्राह्मण नदी की ओर भागा।

तभी राजा प्रसेनजित् नदी में स्नान कर चला आ रहा था। उसने आत्म-हत्या करनेवाले ब्राह्मण को देखा, उससे सारी बात मालूम कर ली। "ब्राह्मण! आत्महत्या क्यों करते हो? राज्य में अगर चोरी

डी. सुबोध कुमार

होती है तो उसका पता लगाने के लिये क्या मैं नहीं हूँ? जिसने तुम्हारा रुपया चुराया है, मैं उसे पकड़ूँगा, नहीं तो तुम्हारा धन मैं अपने ख़ज़ाने से दिलवा दूँगा। जहाँ तुमने यह रुपया गाड़ा था, क्या उस जगह की कोई निशानी है?"—राजा ने पूछा।

"महाप्रभू! जहाँ मैंने पैसा गाड़ रखा ा, वहाँ एक जंगली तौरी का पौधा था। अब वहाँ वह भी नहीं है।"—ब्राह्मण ने कहा।

"जंगली तौरी का पौधा कैसे निशानी हो सकता है? वैसे पौधे तो बहुत हो सकते हैं।"—राजा ने पूछा।

"नहीं, महाप्रभू! वहाँ एक ही जंगली तौरी का पौधा था।"—ब्राह्मण ने कहा।

"तुमने वहाँ पैसा गाड़ रखा है, यह कितनों को मालूम है?"—राजा ने पूछा।

"महाप्रभू! सिवाय मेरे पँछी तक कोई नहीं जानता। अगर किसी को कहना भी चाहूँ तो भला मेरा कौन है, जिससे मैं कहूँ?"—ब्राह्मण ने कहा।

राजा अपने महल में आकर इस चोरी के बारे में सोचने लगा। चोर का पता लगाने का तरीका उसे सूझ गया। उसने मन्त्री को बुलाकर कहा—

"मन्त्री! मेरा स्वास्थ्य अच्छा नहीं है। तुरंत वैद्यों से परामर्श करना आवश्यक समझता हूँ। शहर में जितने वैद्य हों, उन सब को बुलवाइये।"

शीघ्र ही राजमहल में सब वैद्य उपस्थित हुये। एक एक करके राजा ने उनको अपने पास बुलाया और उनसे पूछा—"आज और कल तुमने किन किन रोगों के लिये दवाई दी है? किन किन बूटियों का उपयोग किया है?" उनका जवाब सुनकर राजा ने उन्हें भेज दिया। मन्त्री को, जो यह देख रहा था, राजा का मतलब समझ में न आया।

आखिर एक वैद्य ने कहा—"महाप्रभू! वैश्य शिरोमणि मातृदत्त के लिये मैंने जंगल तौरी का रस कल दिया था।"

राजा ने और गौर से पूछा—"ऐसी बात है! तो तुम्हें जंगल तौरी का पौधा मिला कहाँ?"

"जंगल से ढूँढ़-ढाँढ़कर मेरा नौकर ले आया था महाराज!"—वैद्य ने कहा।

"अच्छा तो उस नौकर को हमारे पास तुरंत हाज़िर करो।"—राजा ने कहा।

वैद्य के नौकर के आते ही राजा ने पूछा—"क्यों, जंगल तौरी के पौधे की जड़ में गड़े हुये हज़ार मोहरों का तूने क्या किया है।"

नौकर डर के मारे पीला पड़ गया। "मैंने घर में रख रखे हैं, महाराज!"—उसने कहा।

"वे फ़लाने ब्राह्मण की हैं। उन्हें हिफ़ाज़त से उसे सौंप दे!"—राजा ने हुक्म दिया। नौकर सलाम करता करता चला गया।

पर मन्त्री को, जो यह सब देख रहा था, यह न मालूम हुआ कि राजा ने मोहरों के चुरानेवाले को कैसे पकड़ा।
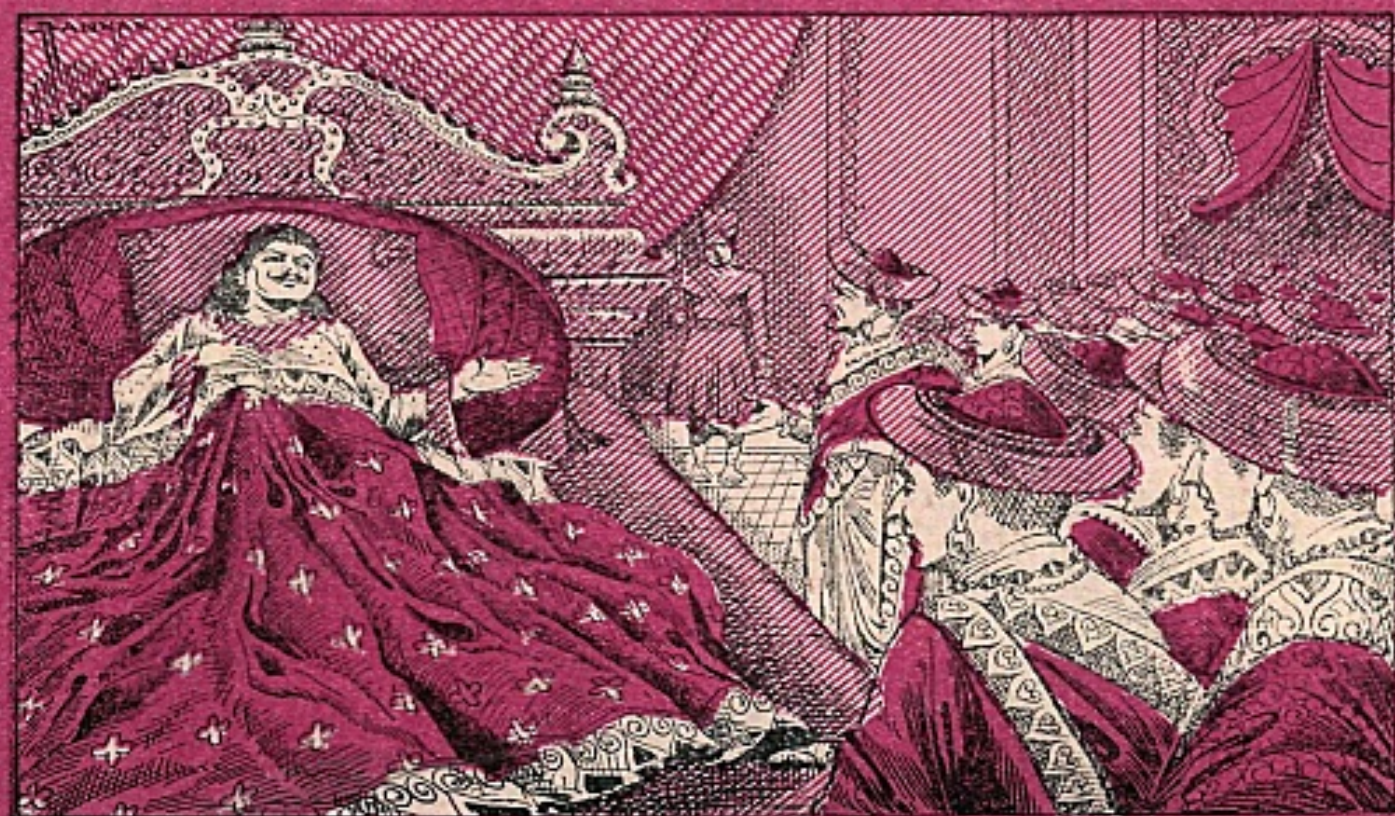
उसने राजा से पूछकर ही यह मालूम करना चाहा।

"महाराज! मुझे यह समझ में नहीं आ रहा कि आपने इतनी आसानी से कैसे चोर पकड़ लिया?"—मन्त्री ने सविनय पूछा।

राजा ने हँसकर कहा—

"चोरी के बारे में जो कुछ ब्राह्मण ने कहा था, उसे सच मानकर ही मैंने चोर को पकड़ने की सोची थी। नगर में लाखों आदमियों में से एक ही आदमी वह चोरी कर सकता था। और ब्राह्मण यह कह भी रहा था कि गड़े हुए पैसे के बारे में किसी को भी न मालूम था। उस जगह पर बिना यह जाने कि वहाँ रुपया गड़ा हुआ है, किसको खोदने की ज़रूरत होगी? यानी जिसको जंगल तौरी की ज़रूरत हो उसी को ही।

"आस पास कहीं जंगली तौरी का पौधा न था। यह बात वह ब्राह्मण ही बता रहा है। यह सच ही होगा, यह भी मैंने विश्वास कर लिया। अलावा इसके अगर कोई धन के लिये ही वह जगह खोदता तो जंगली तौरी का पौधा वहीं छोड़ जाता। जंगली तौरी के पौधे के लिये खोदनेवाला ही दोनों चीज़ों को ले जा सकता है।

जंगली तौरी के पौधे से किन्हें काम रहता है? वैद्यों को। इसीलिये मैंने सब वैद्यों को बुलवाया था। जब मुझे जंगली तौरी के पौधे से औषधी बनानेवाले वैद्य का मालूम हुआ तो मुझे चोर का भी मालूम हो गया। इसमें क्या उलझी हुई बात है मन्त्री!"

यह बात सुन मन्त्री मन ही मन प्रसेनजित की बुद्धिमता की सराहना करने लगा।
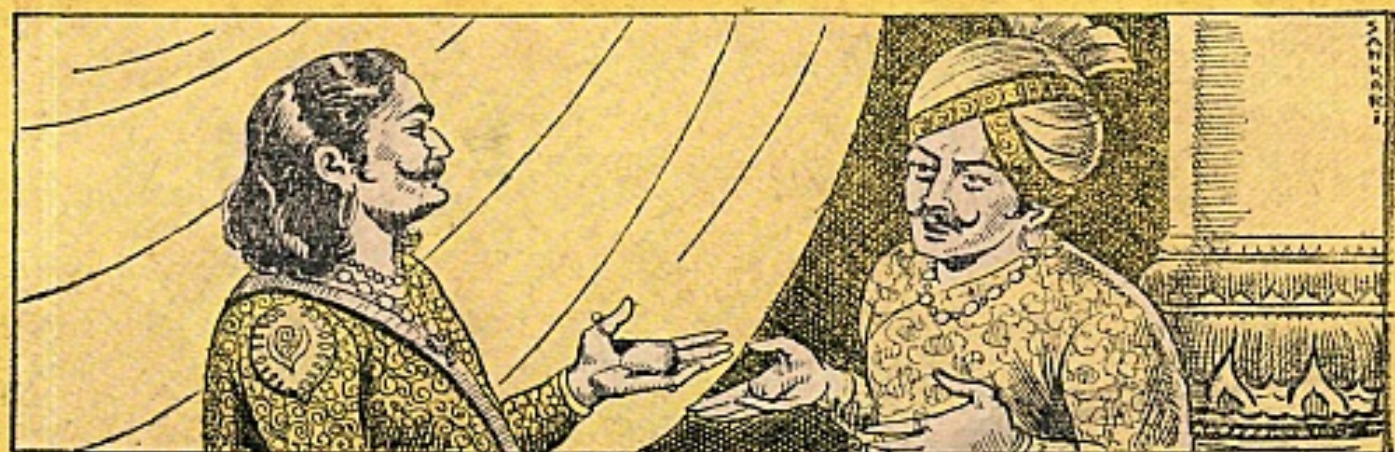
# लोभ का फल

रत्नपुर नामक नगर में शिव और माधव नाम के दो दोस्त रहा करते थे। उन दोनों ने एक दिन उज्जयिनी जाना चाहा, क्योंकि उन्होंने सुन रखा था कि उज्जयिनी के राजा के पुरोहित, शंकर स्वामी ने बहुत सा रुपया जमा किया हुआ था। शिव माधव ने सोचा कि उसका रुपया-पैसा लेकर आराम से ज़िन्दगी काटेंगे।

शिव पक्के ब्रह्मचारी का वेष बनाकर पहिले पहुँचा। सिप्रा नदी के किनारेवाले एक मठ में वह रहने लगा। रोज़ वह शरीर पर कीचड़ लगाकर नदी में नहा, किनारे पर शीर्षासन किया करता था। फिर शिवालय में जाकर घण्टों पूजा-पाठ किया करता। दोपहर होने पर सिर्फ़ तीन घरों में भिक्षा माँगता और भिक्षा को तीन भागों में बाँटता। एक भाग कौवों को देता, एक अभ्यागतों को, और एक भाग स्वयं खाता।

कुछ दिनों बाद राजपूत का वेष बनाकर माधव भी उज्जयिनी पहुँचा। वह अपने साथ कुछ सामान और नौकर-चाकर भी लाया। एक अच्छी जगह पर वह रहने लगा। उज्जयिनी पहुँचते ही माधव सिप्रा नदी में स्नान करने के लिये गया। वहाँ उसने शिव को शीर्षासन करते हुये देखा। साष्टांग नमस्कार कर उससे कहा—"महाशय! फिर कितने दिनों बाद आपके दर्शन करने का भाग्य प्राप्त हुआ है।" शिव ने माधव को देखने के लिये आँखें भी न खोलीं। माधव वापिस चला गया।

उस रात को, शिव और माधव एकान्त में मिले। शंकर स्वामी की सम्पत्ति का अपहरण करने के लिये उन्होंने एक चाल सोची।

श्री कुमारी दीप्ति दत्त

सबेरे होते ही माधव ने नौकर के हाथ धोतियाँ उपहार में शंकर स्वामी के पास भिजवाईं और कहला भेजा—"माधव नाम का राजपूत आपका दर्शन करने के लिये बहुत दूर से आया हुआ है।" शंकर स्वामी बहुत ही लालची था। जब कोई राजा को कोई भेंट देता, वह स्वयं उसका आधा हड़प लेता। और कहीं ऐसा न हो, लोग उसकी बदनामी करने लगे, उसने इस तरह इकट्ठे किये हुये धन को सात घड़ों में रखकर ज़मीन में होशियारी से गड़वा दिया था।

जब शंकर स्वामी ने माधव की भेजी हुई धोतियाँ देखीं तो उसे बहुत प्रसन्नता हुई। उसने सोचा कि कोई नादान, बेचारा आ पहुँचा है, उसने उसको अन्दर बुलवाया। माधव ने शंकर स्वामी को नमस्ते कर कहा—"पंडित जी! मैं दक्षिण का हूँ। मुझे मेरे सम्बन्धियों ने हरा दिया और मैं अपनी बपौती लेकर यहाँ आ गया हूँ। मुझे रुपये-पैसे की तो कोई दिक्कत नहीं है। पर देखिये, कभी मेरे हाथ में भी शक्ति और ओहदा था, हुक्म चलाने की आदत-सी है, इसलिये मेरे नौकर-चाकर कहते हैं कि दरबार में कोई नौकरी कर लूँ। अगर आपने मेरी सहायता की तो मैं भी आपकी मदद करूँगा। मेरे पास हीरे-मोती वगैरह भी हैं।"

हीरे मोती का नाम सुनते ही शंकर स्वामी फूला न समाया। वह माधव को राजा के पास ले गया, और सिफ़ारिश कर उसने उसको दरबार में अच्छी नौकरी भी दिलवा दी।

"यह तो आपके लिये परदेश है। रहने के लिये अच्छी जगह न मिलेगी। इसलिये आप हमारे घर ही रहिये।" शंकर स्वामी ने माधव से कह कर, उसको मना लिया।

माधव शंकर स्वामी के घर रहता, रोज़ दरबार में जाया करता, रात को घर आ जाता। कभी कभी घड़े में से नकली हीरे-मोती निकालकर शंकर स्वामी को दिखा कर कहा करता कि वे बहुत कीमती हैं, उनका मिलना मुश्किल है। शंकर स्वामी भी उसकी बातों पर विश्वास किया करता।

कुछ दिन गुज़र गये। माधव ने अपचन का बहाना कर भोजन करना छोड़ दिया। अगले दिन उसने चारपाई पकड़ी। चार पाँच दिनों में वह सूखकर काँटा हो गया। उसने शंकर स्वामी को बुलाकर कहा—"पंडित जी! मेरा समय नज़दीक आ गया है। मरने से पहिले मैं अपना सारा धन किसी अच्छे ब्राह्मण को देकर पुण्य कमाना चाहता हूँ। किसी योग्य ब्राह्मण को बुलवाइये।"

शंकर स्वामी बहुत सारे ब्राह्मणों को बुलाकर लाया। पर माधव कहा करता—"और भी अच्छे ब्राह्मण को बुलवाइये।" आखिर शंकर स्वामी हताश हो गया।

जान-पहिचान के लोगों ने शंकर स्वामी को सलाह दी—"उस मठ में एक ब्रह्मचारी तपस्या किया करता था। सारी उज्जयिनी
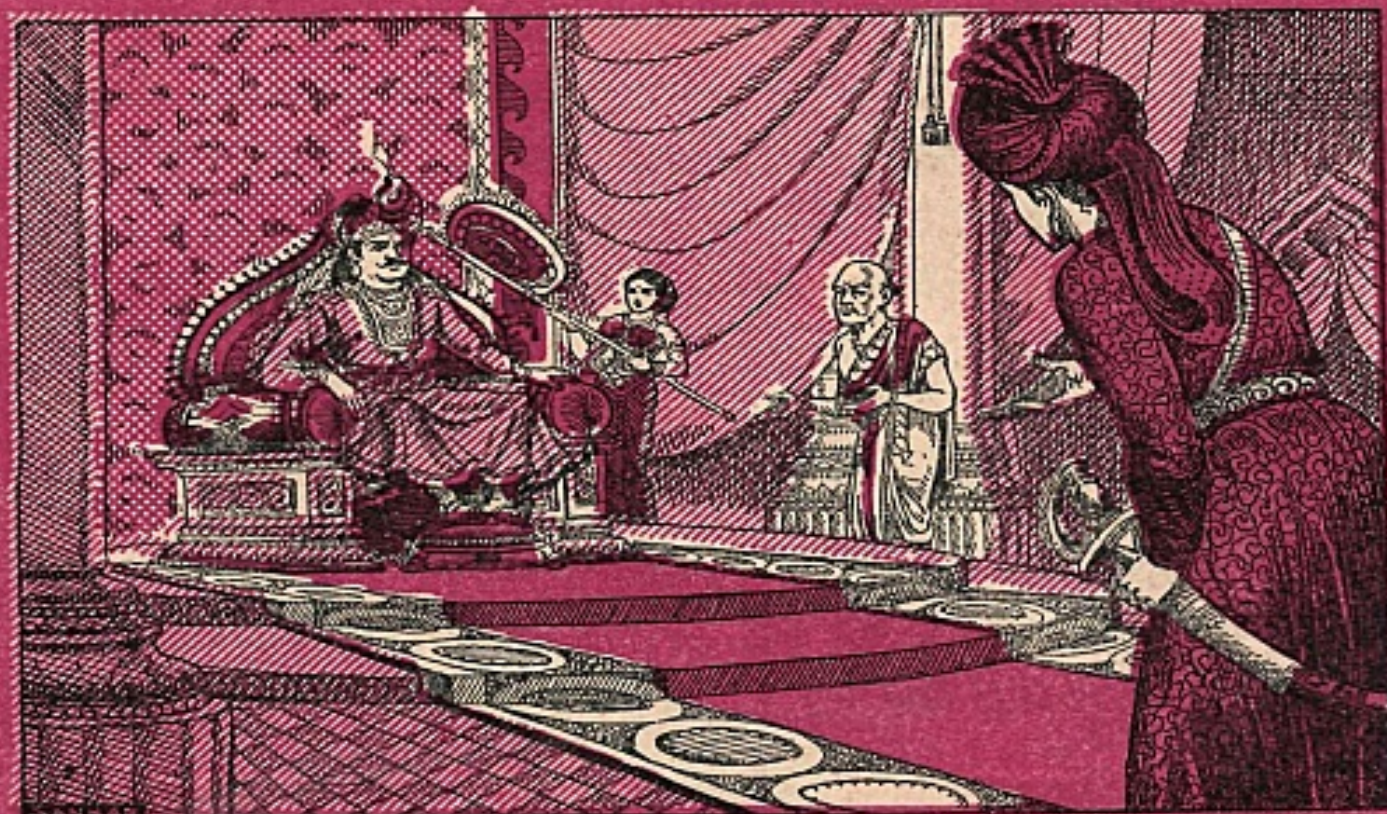
कि आप हमेशा इसी तरह ब्रह्मचारी बने रहें? रत्नों को लेकर शौक से विवाह कीजिये "—शंकर स्वामी ने कहा।

"यहाँ मैं किसी को जानता पहिचानता नहीं हूँ। आप कृपा करके जाइये। मुझे कौन लड़की देगा?"—शिव ने कहा।

"मैं अपनी लड़की दूँगा। अब तो ठीक है? जल्दी कीजिये। वह आदमी मरने को है।" शंकरस्वामी शिव को साथ ले गया। और अपने हाथ से ही उसने माधव के नकली हीरों से भरे घड़े को उसे दान में दिलवाया।

माधव का झूठा रोग भी कम हो गया। उसने दवाई खाना छोड़ दिया। सप्ताह भर में वह पहिले की तरह अच्छा हो गया। उसने कहा—"इस दान के कारण ही तो मैं मौत के मुहँ से निकल गया हूँ।"

अपने वचन के अनुसार शंकरस्वामी ने अपनी लड़की का विवाह, शिव के साथ कर दिया। विवाह के होते ही माधव भी शंकर स्वामी का घर छोड़कर और किसी जगह रहने लगा। उसकी जगह शिव आकर रहने लगा।

को दान देने पर भी उससे अच्छा योग्य व्यक्ति न मिल सकेगा।"

शंकर स्वामी ने मठ में जाकर शिव को देखकर कहा—"महाराज, आइये, रत्नदान ग्रहण कीजिये। शीघ्र ही पधारिये।"

शिव ने हँसकर कहा—"मैं तो भिक्षा पर जीवन निर्वाह करनेवाला ब्रह्मचारी हूँ। मुझे भला रत्नों की क्या ज़रूरत! जाइये! किसी ग्रहस्थी को खोजकर दीजिये।"

"ऐसी बात नहीं है। वह आदमी सिवाय आपके किसी और को नहीं देना चाहता। फिर यह भी कहाँ लिखा है

कुछ दिनों बाद शिव ने ससुर से कहा—"मैं कब तक यहाँ पड़ा रहूँ! सिवाय दान में दिये हुये हीरों से भरे घड़े के मेरे पास कुछ नही है। इसलिये आप उसे रखकर हमें नक़द दे दीजिये। मैं और मेरी पत्नी अलग कहीं अपना घर बसा लेंगे।"

"उन हीरों की कीमत कौन जाने बेटा?"—शंकर स्वामी ने कहा।

"उनकी कीमत से मेरा क्या काम? उस घड़े में क्या रखा है, यह भी मैं नहीं जानता हूँ। उसे आप ही ने दिया था, आप ही ले लीजिये। आपके पास जो कुछ पैसा है, हमें दे दीजिये। मैं सोचूँगा कि मुझे वही दान मिला है। अगर आपको कुछ ज्यादह मिल भी गया तो आप कौन से पराये हैं?"—शिव ने कहा।

शंकर स्वामी ने कुछ न कहा। उसने भूमि में गाड़े हुये धन से भरे सात घड़े निकाले और शिव को दे दिये। उससे रसीद ले ली। जो कुछ लिखा-पढ़ी करनी थी, सो भी कर ली। शिव ने अपनी पत्नी के साथ अपना अलग घर बसाया। उस धन को शिव और माधव ने आपस में आधा आधा बाँट लिया।
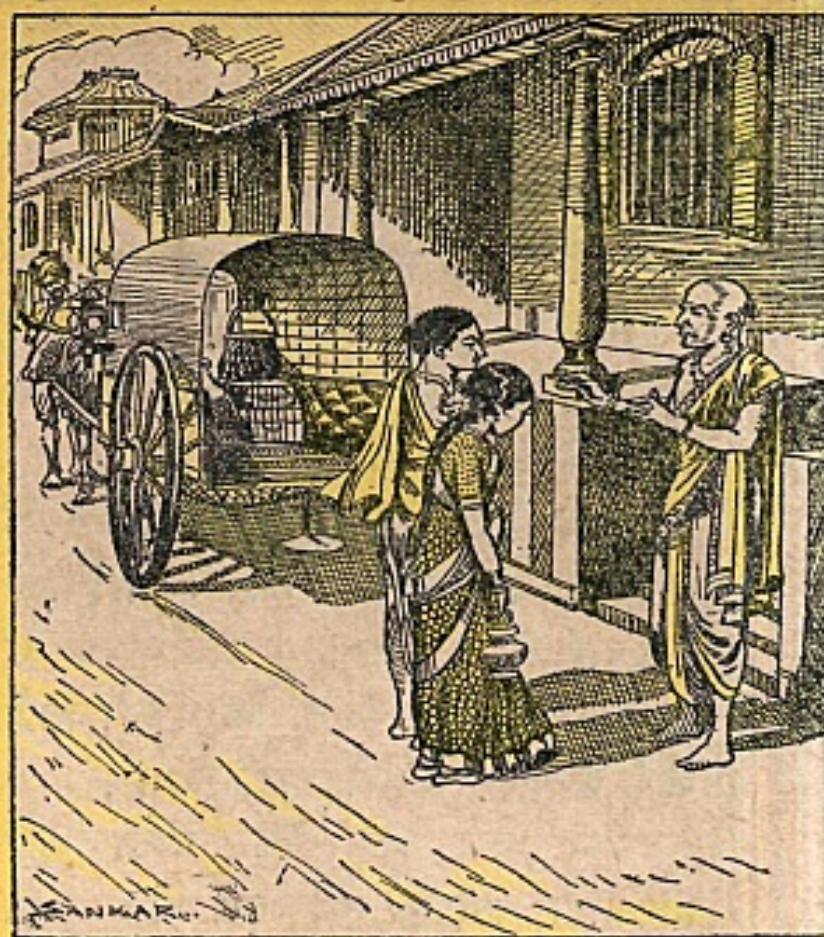
और कुछ दिन गुज़र गये। शंकर स्वामी को सूझा, क्यों न कुछ हीरों को बेच-बाचकर घड़ों को फिर से भरा जाय। उसने माधव के दिये हुये घड़े में से हीरों का हार निकाला और जौहरी के पास कीमत निश्चित करने के लिये ले गया।

"पंडित जी, यह सोना नहीं है, न हीरे ही। किसी धूर्त ने शीशे के टुकड़ों पर पीतल की कलाई पोत कर आपको धोखा दे दिया है।"—जौहरियों ने कहा।

यह सुनते ही शंकर स्वामी का कलेजा थम-सा गया। वह जल्दी जल्दी घर गया।

और घड़े में रखे सब जेवर-जवाहारातों को जौहरियों को दिखाने के लिये ले आया। जल्द उसे मालूम हो गया कि उनमें एक तोला भी सोना न था।

शंकर स्वामी रोता-धोता दामाद के पास गया। "कितना धोखा! मेरा पैसा मुझे वापिस कर दो!"—उसने दामाद से कहा। उसे उसने बताया कि घड़े में सिर्फ़ शीशे के टुकड़े थे, और कुछ न था।

"तो क्या वह मेरी गल्ती है? हीरे-मोती बताकर मुझे क्यों वैसा दान दिलवाया? मैं मज़े में तपस्या किया करता था। तुमने ही मुझे इस गृहस्थ के गढ़े में धकेला है। मैं और क्या करूँ? मैंने तो उस घड़े को खोलकर भी न देखा था। उसमें हीरे थे या पत्थर, यह तो तुम्हें मालूम होना चाहिये, नहीं तो उस माधव को। मैं क्या जानूँ? मुझ से कुछ मत पूछो।"—शिव ने कहा। शंकर स्वामी माधव के पास भागा। माधव ने भी गुस्सा दिखाया।

"उस घड़े में हमारे बाप-दादाओं के जमा किये हुये जेवर-जवाहारात थे। मैंने उसको आपत्ति के समय एक अच्छे ब्राह्मण को दे दिया। और उस दान का ही इतना प्रभाव था कि मैं मरते मरते बच गया। शीशे पत्थर ले जाकर क्या मैंने किसी को जेवर-जवहरात कहकर बेचा है? यह ससुर और दामाद का मामला है। तुम्हीं दोनों आपस में जिम्मेवार हो। निबट लो।"

यह बात सुन शंकर स्वामी अपना-सा मुँह लेकर रह गया। उसे मालूम हो गया कि गल्ती उसी की थी। उसके लोभ ने उसका ही सत्यानाश कर दिया था। वह पछताता पछताता घर चला गया।

काश्मीर देश में प्रवर नाम का एक नौजवान रहा करता था। वह एक अमीर का लड़का था। अच्छा पढ़ा-लिखा और समझदार था। उसे यात्रा करने की सूझी। आवश्यक धन और कीमती वस्त्र लेकर वह यात्रा पर निकल पड़ा। दुर्भाग्य से उसका चोरों से पाला पड़ गया। दिन दहाड़े चोरों ने उसको लूट लिया। उसका सारा रुपया-पैसा, कपड़े वगैरह सब छीन लिये। प्रवर के कपड़े पहिनकर चोर चम्पत हो गये और अपने कपड़े छोड़ते गये। वह बिचारा करता तो क्या करता? उसने चोरों के कपड़े पहिन लिये। दो-तीन दिन तक सफ़र कर शाम को वह एक शहर में पहुँचा।

अन्धेरे में प्रवर शहर की चारों बड़ी सड़कों पर घूमता-भटकता रहा। उससे न किसी ने कोई बात कही, न कुछ पूछा ही। अपनी हालत बताकर उसने जब किसी से खाना माँगने की सोची तो उसे शर्म आ गई। आखिर वह राजमहल के पासवाले अस्तबल में पहुँचा। भूख और प्यास के कारण वह बेहोश-सा हो गया।

उस देश के राजा का नाम जयसेन था। उसके एक लड़की थी, जिसका नाम कांचनवली था। सौन्दर्य में वह तिलोत्तमा थी, और विद्या आदि में सरस्वती। जब वह सयानी हुई तो राजा ने उसकी पढ़ाई-लिखाई बन्द कर दी और उसकी सगाई भी कर दी। परंतु कांचनवली इस हठ पर थी कि जब तक उसको उसके अनुरूप वर न मिलेगा, तब तक वह विवाह ही न करेगी। पिता का खोजा हुआ वर उसको कतई पसन्द न था। इसलिये कांचनवली ने घर

श्री. पंडित घनश्याम प्रसाद मिश्र

बाहर, अस्तबल के पास वह दो घोड़ों को लेकर तैयार रहे। यह ख़बर पाकर भी मन्त्री का लड़का राजकुमारी की सहायता न कर पाया; चूँकि उस दिन राजा के अंतःपुर में नृत्य का प्रबन्ध किया गया था, उसका पिता ज़िद कर उसको वहाँ ले गया था।

जिस नृत्य ने मन्त्री के लड़के को न आने दिया था, उसी ने राजकुमारी को भाग जाने का अच्छा मौका दिया। उसने सिर दर्द का बहाना किया। जब और लोग नृत्य देखने में मस्त थे, वह ज़ंजीरों की मदद से राजमहल की चार-दीवारी पार कर गई और अस्तबल के पास पहुँची। अन्धेरे में उसको प्रवर मजे में सोता हुआ दिखाई दिया। उसको मन्त्री का लड़का समझकर राजकुमारी ने बाँह पकड़कर उठाया और कहा—"उठो, उठो! झट अन्दर जाकर दो घोड़े ले आओ।"

अंगड़ाइयाँ लेता हुआ प्रवर उठा। वह अन्दर से दो घोड़े ले आया। कांचनवल्ली एक घोड़े पर चढ़ गई। दूसरे पर सवार होकर प्रवर को साथ साथ आने के लिये कहा। दोनों थोड़ी देर में शहर पारकर हवा से बातें करने लगे।

से भागने की ठानी; तब तक वापिस न आने का निश्चय किया, जब तक उसको योग्य बर न मिल जाये।

परंतु यह काम बिना दूसरों की सहायता के वह अकेली न कर सकती थी। इसलिये राजकुमारी ने अपनी सेविका द्वारा मन्त्री के लड़के के पास ख़बर भिजवाई। मन्त्री के लड़के और कांचनवल्ली ने एक ही गुरु के यहाँ साथ शिक्षा पाई थी। छुटपन से दोनों एक दूसरे को चाहते थे। कांचनवल्ली ने मन्त्री के लड़के के पास कहला भेजा कि आधी रात के समय, राजमहल के

इतने में सबेरा हुआ। कांचनवल्ली ने अपने घोड़े को एक तालाब के पास लाकर रोक दिया। थोड़ी देर में प्रवर भी पीछे पीछे उसके साथ आ मिला। उसको देखते ही कांचनवल्ली का मुँह फीका पड़ गया। रात भर जो उसके साथ आया था, वह मन्त्री का लड़का नहीं था। उस आदमी की शक़्-सूरत से लगता था, जैसे कोई चोर हो। फटे-पुराने मैले कपड़े पहिने हुये था। दाढ़ी बढ़ी हुई थी। अपनी गल्ती जानकर कांचनवल्ली को बहुत दुःख हुआ, पर वह कर ही क्या सकती थी? अगर अब घर वापिस जाती तो पिता दण्ड देता।

कांचनवल्ली ने सिर उठाकर प्रवर की तरफ़ अच्छी तरह देखा तक नहीं। वह पत्थर की तरह बैठी रही। प्रवर ने भी उससे बातचीत न की। उसने भी नहीं बताया कि सचमुच वह कौन था। वह पासवाले पेड़ से दो दाँतून तोड़ लाया। एक राजकुमारी के सामने फेंक दी। दोनों ने दाँत साफ़ किये।

नित्य कृत्य पूरे कर दोनों फिर घोड़ों पर सवार हुए। थोड़ी देर में वे नदी के किनारे पहुँचे। नदी के किनारे एक किश्ती

छूटनेवाली ही थी। कुछ लोग उस पर चढ़े हुए थे। एक बुढ़िया किश्ती पर मुफ़्त बैठने के लिये किश्तीवाले से प्रार्थना कर रही थी। किश्तीवाले ने बिठाने से इनकार कर दिया और किश्ती ले ही जानेवाला था कि नये मुसाफ़िरों को देखकर वह रुक गया।

प्रवर ने देखा कि किश्तीवाले ने बुढ़िया को मुफ़्त ले जाने से इनकार कर दिया था। उसके पास भी कानी-कौड़ी न थी। वह कांचनवल्ली की तरफ़ दया भरी दृष्टि से ताकने लगा। कांचनवल्ली उसके देखने का मतलब समझ गयी और अपनी

आंचल में से एक अशर्फ़ी निकालकर उसने प्रवर के पैरों के पास फेंक दी। प्रवर ने किश्तीवाले को अशर्फ़ी देते हुए कहा—"लो, यह लो, हमारे साथ इस बुढ़िया को भी ले चलो।" किश्तीवाला मान गया।

किनारे पर पहुँचकर बुढ़िया ने प्रवर से कहा—"बेटा, तुमने मुझे भी पार करवा दिया। मेरा इस संसार में कोई नहीं है। मुझे भी अपने साथ रख लो, दो चार दिन तुम्हारे लिये खाना पकाकर अपना ऋण चुका दूँगी।"

"अच्छा! तो आओ, हमारे साथ तुम भी ज़िन्दगी काटना, दादी।"—प्रवर ने कहा।

दोपहर होते तीनों एक नगर में पहुँचे। उस दिन वे धर्मशाला में रहे। वहीं खा-पीकर सो रहे। अगले दिन प्रवर बाज़ार में जाकर व्यापारियों से कहने लगा—"महाशयो! मैं ज्योतिष जानता हूँ। आप मुझे पैसा दीजिये, मैं आपको आज का भविष्य बता दूँगा, लाभ-नष्ट के बारे में जानकारी दूँगा।" कई व्यापारियों ने उसे अपनी जन्म-तिथि बतायी। उसने उसके

आधार पर उनका भविष्य बताया, व्यापारियों ने बदले में उसे पैसा दिया।

जब अगले दिन प्रवर बाज़ार गया तो बहुत से व्यापारी अपना भविष्य जानने के लिये उसके चारों ओर इकट्ठे हो गये। उसने उनका भविष्य बताया। उसकी कही हुई बातें सच भी निकलीं। उसके लिये आमदनी का एक रास्ता निकल आया। उसने उस शहर में एक मकान किराये पर ले लिया और वहीं रहने लगा।

प्रवर की प्रसिद्धि दिन प्रति दिन बढ़ती गई। यह जानकर कि हीरे-मोतियों के परखने में प्रवर माहिर है, एक चौधरी ने उसको बड़ी तनख्वाह पर नौकर रख लिया।

बुढ़िया समझ रही थी कि कांचनवल्ली सचमुच उसकी पत्नी थी।

एक दिन उस देश के राजा के पास दक्षिण देश से कोई व्यापारी अति मूल्यवान हीरा लाया। राजा हीरे को देखकर बड़ा प्रभावित हुआ। उसने उसका मूल्य पूछा। राजा की इच्छा को देखकर व्यापारी ने कहा—"करोड़ रुपये।" बिना पारखियों की सलाह के राजा इतना रुपया खर्च कर हीरा खरीदना नहीं चाहता था। इसलिये

उसने शहर के जौहरियों को बुलवाया और उनसे हीरे का दाम पूछा। जो जिसके जी में आया, उसने वही दाम बताया—किसी ने पिछत्तर लाख कहे तो किसी ने दो करोड़। वह जौहरी भी आया, जिसके यहाँ प्रवर नौकरी कर रहा था। प्रवर को हीरा दिखाकर उसने उसका दाम पूछा।

"इसका दाम सिर्फ़ एक रुपया है। वह भी इसको काटने-छांटने की मज़दूरी के लिये।"—प्रवर ने बताया।

"सिर्फ़ कह देने से क्या होता है, साबित करके दिखाओ!"—वह व्यापारी

लिये, राजा को प्रवर के अतिरिक्त और कोई व्यक्ति न दिखाई दिया। राजा ने उसको मन्त्री के पद पर नियुक्त कर उसका सम्मान किया।

जब वह मन्त्री बना दिया गया तो सब कोई उसकी निजी बातों के बारे में भी उत्सुकता दिखाने लगे। रानी ने धोबिन से यह मालूम कर लिया कि मन्त्री की पत्नी बहुत ही सुन्दर है। प्रवर के घर में भी वही धोबिन काम करती थी। मन्त्री की पत्नी बहुत ही सुन्दर है, यह राजा को भी रानी द्वारा मालूम हुआ।

"प्रवर तो आज मन्त्री हुआ है। पर जब वह मामूली आदमी था, उसका इतनी सुन्दर स्त्री से कैसे विवाह हुआ?" राजा को सन्देह होने लगा। स्वयं यह देखने के लिये कि मन्त्री की पत्नी वास्तव में कितनी सुन्दर है, राजा ने एक चाल चली। एक बार उसने प्रवर को महल में दावत दी और रानी द्वारा भोजन परोसवाया।

राजा का मतलब प्रवर समझ गया। उनका आतिथ्य स्वीकार करने के बाद यह उसके लिये आवश्यक था कि वह भी राजा को, अपने घर में दावत दे और लोग

गला फाड़ फाड़कर चिल्लाने लगा। प्रवर ने लोहे की एक पटरी मँगवाई और हीरे को उस पर मारा। क्योंकि वह केवल एक शीशे का टुकड़ा था, झट उसके टुकड़े टुकड़े हो गये। सब को यह देखकर आश्चर्य हुआ।

उसी दिन राजा ने प्रवर को अच्छे वेतन पर अपने दरबार में नौकर रख लिया। क्योंकि उसकी सलाह के कारण राजा को कई बार लाभ हुआ था, इसलिये उसकी शोहरत बढ़ने लगी।

इसके थोड़े दिनों बाद राजा का मन्त्री मर गया। उसकी जगह भरने के

जिसे उसकी पत्नी समझ रहे हैं, उससे भोजन परोसवाये। पर जब उसकी वह पत्नी नहीं है, तो कैसे वह किसी को बुलाकर उससे कहे—"देखो, इन्हें भोजन परोसो।"

इसी उधेड़बुन में प्रवर लेटा हुआ था कि बुढ़िया ने आकर कहा—"उठो, बेटा! आओ खाना खा लो।"

"दादी मुझे भूख नहीं लग रही है, तुम लोग खा लो।"—प्रवर ने कहा।

कांचनवल्ली अपनी सूक्ष्म बुद्धि से जान गई कि उसी के कारण प्रवर किसी समस्या में उलझा हुआ है। "जो कुछ करवाना चाहें, कह कर करवा क्यों नहीं लेते, दादी? फ़ालतू माथापची से क्या फ़ायदा!"—उसने कहा।

प्रवर यह बात सुनकर बहुत सन्तुष्ट हुआ। भोजन के लिये बैठते हुये उसने कहा—"बात यह नहीं है दादी! आज राजा ने मुझे भोजन के लिये बुलाकर रानी द्वारा भोजन परोसवाया। उनको दावत देकर हम उनका अगर आतिथ्य न करें, तो क्या अच्छा होगा?"

"मैं कोई ऐसी मूर्ख नहीं हूँ कि खाना आदि भी न बनाना न आये। कह दो दादी कि मैं उस रानी से कोई कम नहीं हूँ।"

अगले दिन प्रवर ने राजा को भोजन का न्योता दिया। कांचनवल्ली ने भरसक कोशिश कर अच्छा खाना तैयार किया। एक प्रकार की साड़ी, जेवर, वेणी पहिन कर उसने पहिले खाना परोसा। फिर अन्दर जाकर दूसरे क्षण में, एक और साड़ी, जेवर वेणी आदि पहिन भोजन परोसा।

राजा ने सन्तोष के साथ पेट भर भोजन किया। घर जाकर राजा ने रानी से कहा—"हमारे मन्त्री की एक पत्नी नहीं, दो पत्नियाँ

हैं। दोनों हीरे जैसी हैं! क्या सौन्दर्य.... क्या नज़ाकत....!"

रानी ने कहा—"परसों समुद्र में स्नान करने के लिये मन्त्री को अपनी पत्नियों को साथ लेकर आने के लिये कहिये।"

प्रवर के सामने अच्छी समस्या पैदा हो गई। पराई स्त्री से रसोई बनवाकर दूसरों को भोजन बँटवाना तो ऐसी कोई बड़ी गलती नहीं है, पर साथ स्नान करने के लिये कहना, क्या अच्छा होगा? अगर पहिले ही कह देता कि विवाह नहीं हुआ है तो बात इतनी दूर पहुँचती ही नहीं। वह तो उसका नाम तक नहीं जानता था, फिर समुद्र में स्नान करने के लिये कैसे ले जाता?

यही बात सोचता प्रवर लेटा हुआ था कि बुढ़िया ने फिर प्रवर को भोजन के लिये बुलाया। "मुझे भूख नहीं है दादी! तुम लोग खा लो"—प्रवर ने कहा।

"दादी! इनसे यह तो पूछो कि छोटी-मोटी बात पर ये उपवास क्यों किया करते हैं? जो एक काम कर सकती है तो क्या दूसरा काम नहीं कर सकती? जो बिठाकर पाल-पोस रहे हैं, उनको कह कर काम

करवाने में क्यों आपत्ति है? पूछो दादी।"—कांचनवल्ली ने कहा।

प्रवर ने राजा की इच्छा के बारे में दादी से कहा।

"यह कौन-सी ऐसी बड़ी समस्या है दादी? सात पालकियाँ, सात साड़ियाँ, सात जाकेटें, एक ही तरह के सात जोड़ी जेवर मँगाने के लिये कहो। समुद्र के किनारे सात दरवाज़ोंवाला तम्बू लगाने के लिये कहो।"—कांचनवल्ली ने कहा।

मन्त्री की पालकी के साथ साथ सात पालकियाँ आईं। एक में कांचनवल्ली बैठी हुई थी और बाकी में, उसके वस्त्र, गहने, वगैरह रखे हुये थे।

जब राजा और रानी नहाने की पोशाक पहिनकर स्नान कर रहे थे, कांचनवल्ली तम्बू के पहिले दरवाज़े में से एक पोशाक पहिन कर निकली और प्रवर के साथ स्नानकर वापिस चली गई। फिर थोड़ी देर बाद, दूसरी पोशाक पहिनकर खेमे के दूसरे दरवाज़े से आई और स्नान करके चली गई।

यह सब देख रानी ने कहा—"मन्त्री की तो सात पत्नियाँ हैं और सब की सब बहुत सुन्दर हैं।"

अगले दिन रानी ने सेविका को सात गोटेदार साड़ियाँ, और अन्य उपहार देकर कहा—"इनको मन्त्री की पत्नियों को देकर उनके नाम मालूम करके आओ।"

यह जानकर कि रानी ने दासी के हाथ उपहार भेजे हैं; कांचनवल्ली ने बुढ़िया को कुछ कहकर उसके पास भेजा। बुढ़िया ने दासी से कहा—"रानी गल्ती कर रही हैं। मन्त्री जी की आठ पत्नियाँ हैं। उनके नाम वही हैं, जो कृष्ण की पत्नियों के हैं।

दासी रानी के पास जाकर आठवीं पत्नी के लिये भी उपहार लायी। कांचनवल्ली

ने आठों पोशाकों को एक एक करके पहिना और भिन्न भिन्न गले से दासी से बातचीत कर, और उपहार लेकर चली गई।

कुछ दिनों बाद, कांचनवल्ली ने बुढ़िया को खूब समझा-बुझाकर कहा कि भोजन करते समय प्रवर को हर चीज़ अधिक परोसे।

"यह क्या दादी? आज इस तरह परोस रही हो? यह सब खाने के लिये है या फेंकने के लिये?"—आश्चर्य से प्रवर ने बुढ़िया से पूछा।

"अगर ज्यादह है तो कह दो दादी कि और भी खानेवाले हैं।"—कांचनवल्ली ने परदे में से कहा।

तब जाकर प्रवर को कांचनवल्ली के दिल की बात मालूम हुई। जब वह भोजन कर बैठा, तो तश्तरी में कांचनवल्ली ने पान-सुपारी लाकर दी।

"हमारी शादी कब है?"—प्रवर ने पूछा।

"देखिये। मैं अपने योग्य वर ढूँढ़ने के लिये घर से निकली थी। भगवान ने मुझे उसी समय आपको दिखाया। पर मैंने आँखें मूँद रखी थीं। हीरे को भी शीशे का टुकड़ा समझे हुई थी। निस्सहाय स्थिति में आपके साथ चली आई। पर आपने किंचित मात्र भी मेरी मर्यादा भंग न की। आपसे बढ़कर उदार व्यक्ति मुझे इस संसार में और कहाँ मिलेगा? आप तो नहीं जानते होंगे, पर मैं बहुत दिनों से आपकी पत्नी ही हूँ।"—कांचनवल्ली ने कहा।

यह सुन प्रवर बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने राजा से कहा कि वह विवाह करने जा रहा है। राजा कांचनवल्ली की होशियारी पर चकित रह गया।

भयंकर द्वीप
धारावाहिक उपन्यास
अगस्त के अंक से शुरू किया जायगा !
CHITRA
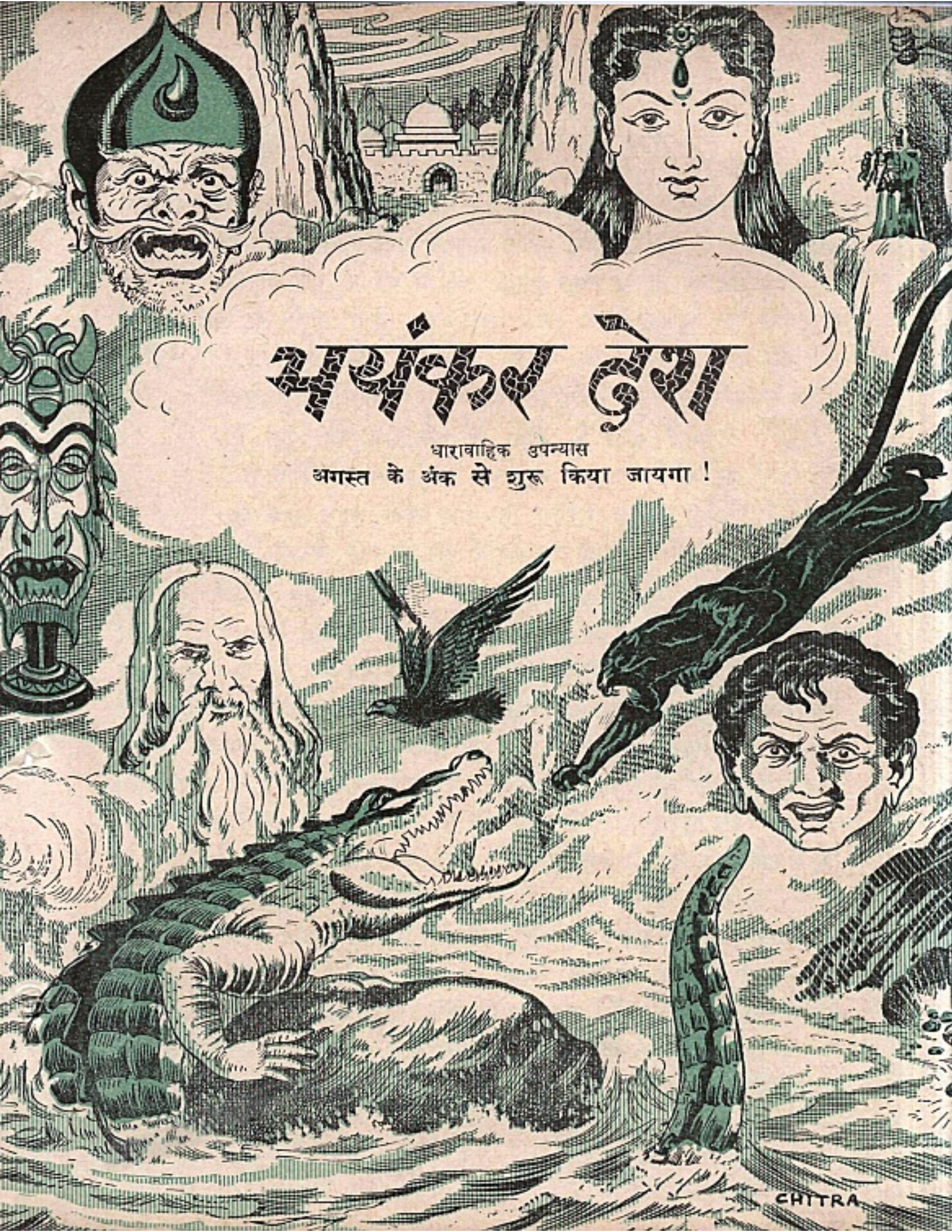
# रंगीन चित्र - कथा : चित्र - १

पहले कभी चीन में किसी पहाड़ी प्रान्त में च्वान्ग नाम का एक नौजवान किसान रहा करता था। वह रात-दिन पसीना बहाकर बड़ी मेहनत करता था।

कमाने को तो वह बहुत कमाता था; पर वह जो कुछ कमाता, वह सब राजा को कर चुकाने में ही चला जाता था। ऐसी हालत में च्वान्ग क्या जमा कर पाता? शादी कब करता? और वह सुखी कैसे रहता? अड़ोस-पड़ोस के लोग च्वान्ग की हालत पर तरस खाकर सहानुभूति के साथ गाते :

"हमारे राजा के किले में धन-धान्य भरा पड़ा है;
पर बेचारे च्वान्ग को एक कौड़ी भी नहीं मिलती!
अपनी अनेक रानियों के साथ राजा बहुत खुश है;
पर च्वान्ग को तो अब लड़की एक भी नहीं मिलती!!"

एक दिन मूर्तियाँ बनानेवाला एक निपुण कलाकार च्वान्ग के यहाँ आया। वह ऐसे चित्र बनाता कि उन्हें देखकर सजीवता का भ्रम हो जाता!

इस चित्रकार ने पहले से च्वान्ग के बारे में सब कुछ सुन रखा था। जब उसने च्वान्ग का घर देखा, तो तुरन्त उसकी सारी कहानी उसे मालूम हो गई! उस पर दया आई और चित्रकार ने जो सजीव और खूबसूरत लड़की का एक चित्र खींचा, और वह सचमुच मालूम होती थी, उसे च्वान्ग को देकर चला गया। च्वान्ग ने उस खूबसूरत लड़की की तस्वीर को अपने घर में टाँग दिया। हमेशा वह उसकी तरफ़ देख-देखकर तन्मय हो जाता था!

पर घर में बैठकर हमेशा उसकी तरफ़ ताकते रहने से उसका पेट तो नहीं भर सकता! इसलिये उसने पहले की तरह खेत में जाकर काम करने की सोची।

जब से उस खूबसूरत लड़की की तस्वीर दीवार पर टाँगी थी कि उसके मन में तरह तरह भावनाएँ उमड़कर आने लगीं। दूसरे दिन खेत जाते हुए च्वान्ग ने उस चित्र की तरफ़ देखा और बड़ी साँस ली। उसने सोचा—"अगर ऐसी सुन्दरी मेरे घर में रहकर रसोई आदि में मदद देती तो कितना अच्छा होता....!"

# फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

सितम्बर १९५५ :: पारितोषिक १०)

**कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।**

ऊपर के फोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर भेजनी चाहिये।

**फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता**
**चन्दामामा प्रकाशन**
वडपलनी :: मद्रास - २६

## जुलाई – प्रतियोगिता – फल

जुलाई के फोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषिका को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फोटो : आता है याद मुझको गुज़रा हुआ ज़माना!

दूसरा फोटो : वह झाड़ियाँ चमन की वह मेरा आशियाना!!

श्री. केदारनाथ, चरणदास लाइन, बजार ईस्ट, पूना - ३

# समाचार वगैरह

भूगर्भ शास्त्र के विशेषज्ञों ने बताया है कि कृष्णा नदी के किनारे हीरों के मिलने की सम्भावना है। कृष्णा नदी आन्ध्र राज्य की एक प्रमुख नदी है। पहिले किसी ज़माने में इस इलाके में, कहा जाता है, हीरों की खान थी और उनका अच्छा व्यापार होता था। दक्षिण में गोलकोण्डा भी हीरों के लिये प्रसिद्ध है।

* * *

उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के इलाकों में अब भी डाक-डकैतों का आतंक है। इधर सरकार ने डाकुओं के कई गिरोहों को गिरफ़्तार कर लिया है और कइयों को गोली से उड़ा भी दिया है।

पिछले दिनों, समाचार मिला है कि फ़तेहगढ़ के सेन्ट्रल जेल से, बनावटी वारन्ट बनाकर, बारह डाकू और हत्यारे भाग निकले, जिन में से कई बदनाम मानसिंह डाकू के गिरोह से सम्बन्धित समझे जाते हैं। परन्तु मानसिंह, अन्यत्र पुलिस के हाथों स्वयं मारा गया।

* * *

अफ्रीका के जङ्गलों में, जो विचित्र जानवरों के लिये प्रसिद्ध है, एक और विचित्र प्राणी पाया गया। यह प्राणी आकार में लोमड़ी की शक्ल का है। मगर उसकी पूँछ नहीं होती। वह कई दिनों तक कुछ नहीं खाता। उसे माँस से भी
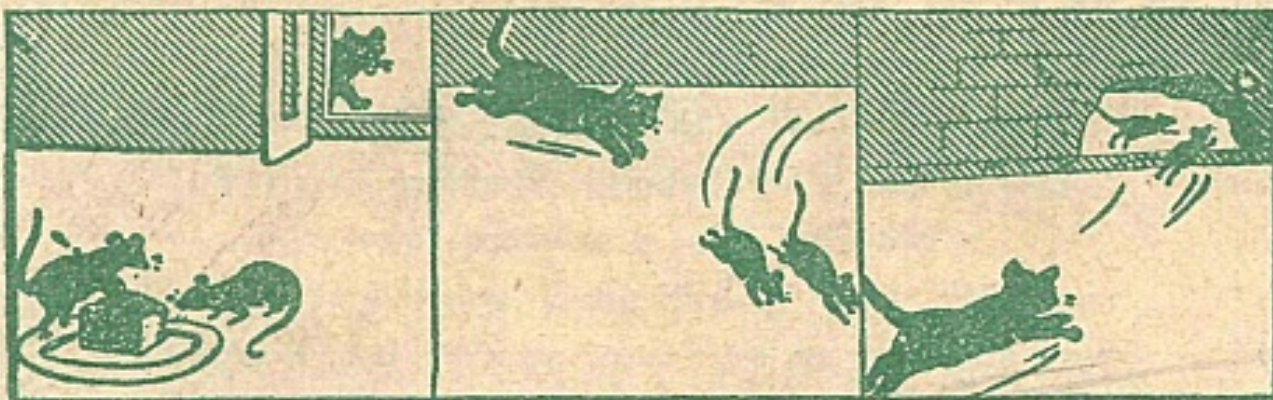
परहेज़ है। वैज्ञानिक इस प्राणी के बारे में खोज कर रहे हैं।

* * *

वीतनाम में गृह युद्ध छिड़ गया है, जिसके फलस्वरूप वहाँ के राजा बाओ दाई को पद-च्युत कर दिया गया है। वीतनाम में पिछले कई सालों से फ्रान्सीसी साम्राज्यवादियों के विरुद्ध युद्ध चलता आ रहा है।

वीतनाम को हिन्द-चीन भी कहा जाता है। किसी जमाने में यहाँ भारत के हिन्दुओं ने अपने उपनिवेश बसाये थे। अब भी हिन्दू मन्दिरों के अवशेष वहाँ मिलते हैं, जो उस देश के दर्शनीय स्थलों में गिने जाते हैं।

* * *

हिन्दी को सरकारी भाषा का परिधान देने के लिये, एक आयोग की स्थापना की जा रही है, जिसके अध्यक्ष, बम्बई के भूतपूर्व मुख्य मन्त्री श्री बी. जी. खेर होंगे। आयोग की स्थापना संविधान के अनुसार हो रही है।

आयोग इस विषय की जाँच-पड़ताल करेगा कि कैसे अंग्रेजी की जगह पर हिन्दी प्रचलित की जाये, व अहिन्दी भाषी प्रान्तों में हिन्दी का प्रचार किस आधार पर हो।

* * *

बम्बई के 'चिल्ड्रन्स क्लब' के १२० बालक-बालिकाएँ ता. १७ मई '५५ के सबेरे 'चन्दामामा' कार्यालय में आये। उन बच्चों ने 'चन्दामामा' की विविध शाखाओं में जाकर वहाँ के कार्य के बारे में बड़ी दिलचस्पी के साथ जानकारी हासिल कर ली। दोपहर को उनको दावत दी गयी। वे शाम तक 'चन्दामामा' के अहाते में खेलते-कूदते रहे।
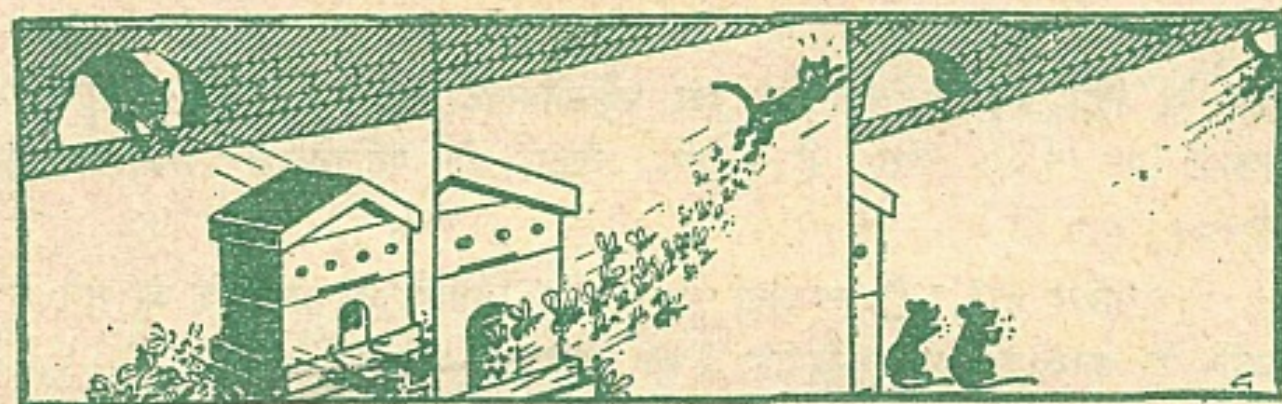
# ग्रह

सूर्य के व्यास की लंबाई ८६७,०० मील है। सूर्य से सब से दूर जो ग्रह है, उसका नाम प्लुटो है। सूर्य से इसकी दूरी ३६७ करोड़ ५० लाख मील है।

सूर्य के सब से समीप रहनेवाला ग्रह बुध है। सूर्य से इसकी दूरी ३,५९,८७,००० मील है।

बुध के बाद, जहाँ तक सूर्य के सामीप्य का सम्बन्ध है, शुक्र ग्रह आता है। यह सूर्य से ६,७२,४५,००० मील है। इसी प्रकार भूमि सूर्य से ९,२९,६५००० मील है।

कुज ग्रह सूर्य से १४,१६,५०,००० मील दूर है।

गुरु ग्रह सूर्य से ४८,३६,७८,००० मील दूर है।

शनि ग्रह सूर्य से ८८,६७,७९,९०० मील दूर है।

युरेनस ग्रह गुरु सूर्य से १७८ करोड़ ३० मील दूर है।

नेप्ट्यून ग्रह सूर्य से २७९ करोड़ लाख मील दूर है।

प्लुटो ग्रह सूर्य से ३६७ करोड़ ५० लाख मील दूर है।

सूर्य का प्रकाश सूर्य मण्डल के सभी ग्रहों पर समान रूप से नहीं पड़ता। जितना प्रकाश बुध पर पड़ता है, उससे लगभग चार गुना शुक्र पर, करीब करीब नौ गुना भूमि पर पड़ता है।

जितना प्रकाश भूमि पर पड़ता है, उससे आधा भी, भूमि से परे स्थित कुज पर नहीं पड़ता। गुरु ग्रह को पहुँचनेवाला प्रकाश भूमि पर पहुँचनेवाले प्रकाश का ९०० भाग है; और प्लुटो को पहुँचनेवाले प्रकाश का १५०० भाग है।

इसलिए हमें यही समझना होगा कि सिवाय उन ग्रहों के जो सूर्य के समीप हैं, बाकी सब ग्रह अन्धकार में ही चक्कर काट रहे हैं।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Ltd., Madras 26, and Published by him for Chandamama Publications, Madras 26. Controlling Editor: SRI 'CHAKRAPANI'

Photo by A. L. Syed

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

वह झाड़ियाँ चमन की
वह मेरा आशियाना !!

प्रेषक
श्री. केदारनाथ, पूना

CHANDAMAMA (Hindi) July 1955 Regd. No. M. 5452

रङ्गीन चित्र-कथा, चित्र — १